दोषपूर्ण सामग्री व अपर्याप्त सेवा एवं उपभोक्ता

जैसे ही मनुष्य इस दुनिया में आता है उसके उपभोग की प्रक्रिया आरंभ हो जाती है। सारा जीवन उसको कपड़े, तेल, साबुन, पानी व अनेकों रूपों में अनेकानेक वस्तुओं की आवश्यकता रहती है। जब हम बाज़ार जाते हैं तो सही गुणवत्ता, सही माप, सही कीमत एवं प्रयोग के तौर तरीकों की जानकारी के रूप में हम अपने पैसे के उचित मूल्य की अपेक्षा करते हैं। परन्तु ऐसे भी अनेक अवसर आते हैं जब हम परेशान होते हैं या ठगे जाते हैं। कई बार वस्तुएँ वर्णित गुणों पर खरी नहीं उतरतीं या उनमें कुछ दोष रह जाते हैं। इस प्रकार से सेवाओं में कई बार कमी या त्रुटियाँ रह जाती हैं।

जब यह समाज अभिनव और सीमित था तब उपभोक्ता विरोध –वस्तुतः नगण्य था क्योंकि समाज में व्यापारिक कुरीतियाँ नहीं थीं। उस समय के रहन–सहन में अनुचित व्यापार असंभव था। उस सामाजिक व्यवस्था में किसी को दिन में व्यापार के नाम पर ठग कर शाम को उसके साथ घुल–मिल कर रहना दुष्कर था।

औद्योगिक क्रांति एवं जनमानस के गाँवों से शहर की ओर पलायन तथा शहरों के अपरिचित परिवेश ने हर प्रकार की बुराइयों का द्वार खोल दिया। उपभोक्ता की परिभाषा खान–पान तथा वस्त्र आवरण की प्रक्रिया से कहीं अधिक विस्तृत हो गयी। इसने जीवन तथा जीवन–यापन के सम्पूर्ण चक्र को अपनी परिधि में ले लिया।

उपभोक्ता शिक्षा का अभ्युदय इस अवधारणा के साथ हुआ कि तुच्छ लाभ के लिये कुछ लोग किसी भी वस्तु को थोड़ा सा विकृत करके

सस्ता बेच सकते हैं। प्रारंभ में तुलनात्मक अथवा चुनिन्दा खरीददारी के द्वारा अपना रोष प्रकट किया गया अथवा ग्राहक खराब वस्तु को विक्रेता को वापस करने अथवा अदला–बदली करवाने के लिये बाध्य कर सका।

परन्तु समय के साथ काफी कुछ बदल गया। आज का उपभोक्ता अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक है। वह अधिकतम कुशलता एवं न्यूनतम व्यय द्वारा अपनी समस्याओं के निदान करने वाले मंचों के प्रति भी सजग है। इस लेख का अभिप्राय इसी सजगता का सुदृढ़ करना है तथा जो उपभोक्ता अपने मूलभूत अधिकारों के प्रति अनभिज्ञ है उन्हें इस संबंध में उपलब्ध निदानों व समुचित रूप से प्राप्त करने की दिशा में उचित निर्देश देना है।

राम एक प्रसिद्ध ब्रांड के जैम की शीशी खरीदता है। भाग्यवश ढ़क्कन खोलने से पहले ही उसमें उसे एक मक्खी दिखाई पड़ी। एक चतुर उपभोक्ता की भांति उसने बदले में दूसरी शीशी मात्र लेने का निर्णय नहीं किया अपितु उसने जिला उपभोक्ता मंच का दरवाजा खटखटाया। मंच ने उसे दस हजार रुपये की क्षतिपूर्ति दिलाई। उपभोक्ता मंच ने उत्पादक के इस तर्क को ठुकरा दिया कि चूंकि उपभोक्ता ने जैम का सेवन ही नहीं किया और उसको कुछ नुकसान नहीं हुआ अत: वह शीशी के बदले में शीशी प्राप्त करने की प्रार्थना कर सकता है। इस पर अदालत ने कहा कि यदि शीशी खुल गई होती तो उत्पादक कदाचित् भी अपनी गलती स्वीकार नहीं करता तथा यही तर्क देता कि उत्पादक विशेष को बदनाम करने के लिये यह सब किया गया है। किसी खाद्य पदार्थ में मक्खी निकलना एक गंभीर स्वास्थ्य समस्या थी तथा ऐसे मामलों में दण्डात्मक निर्णय ही आवश्यक है।

इसी प्रकार शीतल पेय की बोतल के फफूँदीग्रस्त होने के मामले में

भी अदालत ने उपभोक्ता को क्षतिपूर्ति का हकदार बताया [**नरायणवेंकटकृष्णन अयंगर** बनाम **शक्ति फूड्स** (1994) 2 CJP 652 (Mah.)]

प्रेशर कुकर के फटने से लगी चोट के कारण भी ग्राहक को दोषपूर्ण उत्पाद के एवज में क्षतिपूर्ति दिलायी गई। [**टी.टी. (प्रा.) लि.** बनाम **अखिल भारतीय ग्राहक पंचायत** II (1996) 2 CPJ 239 (NC)]

उपभोक्ता संरक्षण हेतु विधान

उत्पादकों एवं वितरकों द्वारा अनेकों अवांछनीय एवं अनुचित व्यापारिक पद्धतियों को देखते हुए सरकारों ने विश्व के प्रायः प्रत्येक भाग में उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने के लिए अनेकों कानून बनाये हैं। उदाहरण के लिए इंग्लैंड का Trade Description Act, 1968 उत्पादों अथवा सेवाओं के भ्रामक निरूपण तथा मूल्य ह्रास को प्रतिबन्धित करता है। इसी प्रकार स्वीडन में भी अवांछनीय गतिविधियों को The false or deceptive Marking Practices of Goods Act, 1971 के द्वारा रोका गया है। 1972 में food products law पारित किया गया जो स्थानीय एवं आयातित डिब्बाबंद खाद्य पदार्थों के विषय में है। अनेकों देशों में उपभोक्ता परख कानून बनाये गये हैं जो किन्हीं प्रतिबन्धित पद्धतियों में उपभोक्ता की क्षति की भरपाई करने की व्यवस्था करते हैं। यही तथ्य संयुक्त राज्य अमेरिका के Sherman Act व Clayton Act, आस्ट्रेलिया के Trade Practice Act, कनाडा के Combines Investigation Act तथा स्पेन के Act against Restraint of Competition पर भी लागू होता है।

कुछ देशों में विज्ञापनों में किये गये दावों को प्रमाणित करने के लिए भी वैधानिक संस्थाओं को उचित शक्तियाँ प्रदान की गई हैं। उदाहरण के लिए अमेरिका का फेडरल ट्रेड कमीशन सत्यापन एवं स्पष्टीकरण के लिए बनाया गया है। इसका तात्पर्य है कि यदि F.T.C. द्वारा किसी विज्ञापन में उपलब्ध सूचनाओं को अपर्याप्त माना जाता है तो यह कमीशन उस कम्पनी को विज्ञापन द्वारा उस उत्पाद की कमियों और सीमाओं के बारे में अधिक जानकारी मांग सकता है जिससे कि उपभोक्ता उत्पाद की घनात्मक एवं ऋणात्मक गुणों के विश्लेषण के बाद अपना चयन कर सकता है। यह कमीशन विज्ञापनदाताओं को उत्पाद के विषय में विज्ञापनों में उसकी सुरक्षा, कार्य कुशलता, गुणवत्ता अथवा मूल्य तुलनाओं के विषय में उपलब्ध आँकड़े उपलब्ध कराने के लिए भी कह सकता है। ऐसे सत्यापन का उद्देश्य उपभोक्ता को पर्याप्त जानकारी दिलाकर एक सजगतापूर्ण एवं पूर्णरूप से उचित उत्पाद चयन करने की सहुलियत देता है। वाहन उत्पादक, घरेलू उपकरण, साबुन, टेलीविजन, श्रवण यन्त्र, खुदरा बिकने वाली दवाईयाँ आदि के उत्पादक समूह को कमीशन ने अपने विज्ञापनों में किये गये दावों के विषय में आवश्यक दस्तावेज प्रस्तुत करने के लिए भी कहा है। कमीशन के अनेकोनेक निर्णयों में सुधात्मक विज्ञापन देने की भी संतुति की गई है। सुधात्मक विज्ञापन इस आशय पर आधारित होते हैं कि उत्पादकों को कुछ त्रुटिपूर्ण एवं अपुष्ट सूचना पोषित की गई है तथा इसके अपशिष्ट प्रभाव को कम करने के लिए ऐसे सुधात्मक विज्ञापन नितान्त आवश्यक हैं।

दि वारनर - लैम्बर्ट बनाम ट्रेड कमीशन इसका एक ज्वलन्त उदाहरण है। इस मामले में F.T.C. ने वारनर-लैम्बर्ट को उसके उत्पाद listrine के विज्ञापन को रोकने व पुनः मुद्रित न करने का आदेश दिया जिसमें listrine को माऊथ वाश के अतिरिक्त जुकाम के भी अवरोध

क उपचार के रूप में दर्शाया गया था। F.T.C. ने यह भी आदेश दिया कि भविष्य के सभी संचार माध्यमों पर दिखाये जाने वाले विज्ञापनों में वारनर-लैम्बर्ट को निम्नलिखित कथन का उल्लेख करना होगा।

"पहले दिखाये गये विज्ञापन के विपरीत, listrine जुकाम अथवा गले की खराश को रोकने या उनका कष्ट कम करने में सहायता नही कर पायेगा।"

साथ ही F.T.C. ने यह भी कहा कि अप्रैल 1962 से मार्च 1972 तक listrine के विषय में जो एक करोड़ डालर के विज्ञापन किये गये थे उतनी ही राशि के भविष्य में विज्ञापनों पर उक्त संदेश दिखाना होगा। उच्चतर अपील अदालत ने कमीशन के सभी आदेशों को उचित ठहराया किन्तु कम्पनी को ''पहले दिखाये गये विज्ञापन के विपरीत'' वाक्य का प्रयोग न करने की छूट दे दी।

भारत में उपभोक्ता संरक्षण सम्बन्धी कानून

भारतवर्ष में भी गत वर्षों में उपभोक्ता हितों की सुरक्षा की दृष्टि से बड़ी संख्या में कानून बनाये गये हैं। ये कानून उत्पादों की उपलब्धता, वितरण, मूल्य एवं गुणवत्ता को नियन्त्रित करने के लिए बनाये गये हैं। सरकार को विक्रय के नियम, विनियम तथा व्यापार और व्यवसाय को नियमित करने की शक्तियाँ प्रदान की गई है।।

उपभोक्ता संरक्षण कानून 1986 में लागू किया गया था। अधिनियम की धारा तीन में प्रावधान किया गया है कि इस अधिनियम की विभिन्न व्यवस्थायें तत्कालीन किसी अन्य कानून की व्यवस्थाओं के साथ ही लागू होगी न कि उनके विपरीत। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस धारा में इस

बात की अवधारणा की गई है कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के लागू होने से पहले भी उपभोक्ताओं के संरक्षण के लिए कतिपय कानून विद्यमान थे। इस अधिनियम में इन कानूनों को बदलने अथवा सुधारने का प्रयास नहीं किया गया है वास्तव में इस अधिनियम की विभिन्न व्यवस्थायें इस अधिनियम के लागू होने से पहले के कानूनों के अतिरिक्त हैं।

महत्वपूर्ण अधिनियम

उपभोक्ता हितों की रक्षा करने के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण अधिनियम इस प्रकार हैं-

भारतीय अनुबन्ध अधिनियम 1872

अन्य व्यवस्थाओं के अतिरिक्त वस्तुओं की बिक्री व खरीद भारतीय अनुबन्ध Act, 1972 धाराओं के अंतर्गत संचालित होती है। कोई अनुबन्ध स्थापित करने के लिए कम से कम दो पक्षों (उदाहरण के लिए विक्रेता एवं खरीदार) के बीच सहमति होनी चाहिए। यह सहमति आदान-प्रदान के दो तत्वों से बनती है। प्रस्ताव प्रस्तुत करने वाला पक्ष प्रदाता माना जाता है तथा जिसको प्रस्ताव किया जाता है उसे प्रदायी माना जाता है।

भारतीय अनुबन्ध अधिनियम, 1872 धोखाधड़ी, जबरदस्ती, अवांछनीय प्रभाव अथवा भूलवश किये गये अनुबन्धों को निष्प्रभावी मानते हुए उपभोक्ताओं को संरक्षण प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में यदि कोई ग्राहक उत्पाद की गुणवत्ता अथवा मूल्य आदि के बारे में विक्रेता द्वारा ठगा जाता है तो वह ग्राहक इस सौदे के अनुबन्ध को समाप्त कर सकता है तथा

अपने द्वारा दी गई राशि को वापिस मांग सकता है। इसके अतिरिक्त वह जानबूझ कर किये गये इस अनुचित व्यापार के बदले क्षतिपूर्ति का भी दावा कर सकता है।

वस्तु बिक्री अधिनियम 1930

हालांकि यह कानून वस्तुओं की बिक्री को नियमित करने के लिए बना था जिससे कि ग्राहक और विक्रेता दोनों के हितों की रक्षा हो सके परन्तु वास्तव में इसको खरीदार अथवा उपभोक्ता के हित की ही मूलभूत से रक्षा करने वाला कानून माना जायेगा।

अधिनियम की धारा 14 से 17 की संरचना इस प्रकार की गई है कि खरीदार को सौदे से बचने व यदि सौदे की शर्तों का पालन नहीं होता है तो क्षतिपूर्ति का दावा करने के अधिकार का निदान देकर उसके हितों की रक्षा होती है। प्रत्येक वस्तु की बिक्री के अनुबन्ध में, यदि ये स्पष्ट रूप से नकारी गई हो, निम्नलिखित शर्तों और प्रतिभूतियों का समावेश माना जाता है।

(1) **स्वामित्व सम्बन्धी शर्त** - यह किसी विक्रय के मामले में अंतर्निहित शर्त है कि विक्रेता के पास उन वस्तु/वस्तुओं की बिक्री का अधिकार है तथा यदि वह विक्रय की सहमति करता है तो निष्पादन के समय उसके पास वस्तु/वस्तुओं की बिक्री का अधिकार होगा। इसके परिणाम- स्वरूप यदि विक्रेता का यह अधिकार अपुष्ट अथवा अमान्य है तो ग्राहक को अपनी ध नराशि वापिस मांगने और क्षतिपूर्ति का दावा करने का अधिकार है।

(2) **वर्णन द्वारा विक्रय** – यदि वस्तुएं किसी वर्णन द्वारा बेची जाती हैं तो यह एक अतर्निहित शर्त है कि ये वस्तुएं अपने वर्णित गुणों के अनुरूप होंगी। यदि नमूने और वर्णन के आधार पर बिक्री की जाती है तो बिक्रित वस्तुएं प्रस्तुत नमूनों व वर्णन से मेल खानी चाहिए।

(3) **गुणवत्ता अथवा उपयुक्तता सम्बन्धी शर्त** – यह शर्त ''कैविएट एम्पटर'' यानि ''जागरूक खरीदार'' के सिद्धान्त का अपवाद है। यह शर्त उसी अवस्था में लागू होती है जब ग्राहक विक्रेता को अपनी आवश्यकता और आशय बताकर विक्रेता जिस व्यापार में संलग्न है उससे सम्बन्धित विक्रेता के चयन पर ही निर्भर करेगा।

(4) **बिक्री योग्यता की शर्त** – यह शर्त ग्राहक को वस्तुओं में किसी गुप्त दोष से सुरक्षा प्रदान करती है यानि ऐसे दोष जो उपरी साधारण जाँच–परख से पहचान में न आयें।

(5) **नमूने से मेल खाने की शर्त** – जहाँ पर बिक्री को नमूने के आधार पर किया जाये वहां सम्पूर्ण माल की बिक्री पर यह शर्त लागू होनी है यानि कि जिस प्रकार के नमूने के आधार पर बिक्री तय हुई थी मुख्य सप्लाई भी इसी गुणवत्ता पर हो। इसके अतिरिक्त यदि नमूना बिक्री योग्य ना भी हो तब भी मुख्य सप्लाई बिक्री योग्य होनी चाहिए।

(6) **प्रतिभूतियाँ** – वस्तुओं के विक्रय अधिनियम की धारा 14बी तथा 14सी के अनुसार ग्राहक का निर्बाध स्वामित्व का अधि कार।

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955

जन-साधारण के हित में यह अधिनियम केन्द्रीय सरकार को अधोलिखित शक्तियाँ प्रदान करता है :

(क) उत्पादन, विपणन, वितरण, भंडारण तथा माल ढ़लाई संबंधी;

(ख) इस अधिनियम के अन्तर्गत घोषित आवश्यक वस्तुओं का मूल्य नियन्त्रण।

इस अधिनियम का पालन एवं इसके अन्तर्गत दिये गये आदेशों का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिये अधिनियम का उल्लंघन करने वालों के लिये दण्ड का प्रवधान किया गया है।

खाद्य अप-मिश्रण उन्मूलन अधिनियम, 1955

खाद्य पदार्थों में मिलावट रोकने की असामाजिक बुराई तथा खाद्य पदार्थों की शुद्धता सुनिश्चित करने के लिए इस अधिनियम का प्रतिपादन किया गया। इसके तहत खाद्य मानक स्थापित करने के लिये एक केन्द्रीय समीति का प्रावधान है जो इस अधिनियम के अन्तर्गत उठने वाले मुद्दों पर केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों को परामर्श देती है तथा अन्य निर्धारित कार्यकलापों को सुनिश्चित करती है।

इस अधिनियम में खाद्य सामग्री सम्बंधित अहर्ताऐं विनियमित हैं तथा खाद्य विश्लेषण के मानकों का विस्तार दिया गया है। इसके लिये अधिनियम में एक लोक खाद्य विश्लेषक का पद निर्धारित किया गया है जिसका कार्य भेजे गये नमूनों का विश्लेषण करना है।

अधिनियम में यह भी प्रावधान किया गया है कि कोई उपभोक्ता या मान्यता प्राप्त उपभोक्ता संघ किसी भी खरीदी हुई खाद्य सामग्री (उपभोक्ता का संघ का सदस्य होना अनिवार्य नहीं है) का विश्लेषण लोक खाद्य विश्लेषण से करवा सकता है। विश्लेषक अपनी रिपोर्ट स्थानीय स्वास्थय अधिकारियों को भेजेगा और यदि इस विश्लेषण में खाद्य सामग्री में मिलावट होना पाया जायेगा तो अपमिश्रित खाद्य पदार्थ बेचने वाले व्यक्ति के विरुद्ध दण्डात्मक कार्यवाही प्रारंभ की जायेगी।

ट्रेड तथा मर्केन्डाइज़ अधिनियम, 1958

देश में उपभोक्ता संरक्षण सुनिश्चित करने के लिये तथा ट्रेड मार्क संरक्षण हेतु इस अधिनियम में विस्तृत व्यवस्थाएँ की गई हैं। साथ ही उपभोक्ताओं व जनसाधारण के हित में वस्तुओं पर धोखा-धड़ी से नकली ट्रेडमार्क प्रयोग रोकने के लिये इस अधिनियम में व्यापक व्यवस्थाएँ हैं।

माप तौल मानक अधिनियम, 1976

अपने शीर्षक के अनुरूप यह अधिनियम व्यापार में प्रयुक्त माप तौल संबंधी, मानकों का निर्धारण करता है। इसका उद्देश्य वस्तुत: उपभोक्ता हितों का संरक्षण करना है। यह अधिनियम निश्चय ही उपभोक्तापरक है क्योंकि इसके अन्तर्गत स्थापित मानकों का प्रयोग प्रत्येक सामग्री उत्पादन के लिये अनिवार्य है तथा इन मानकों के द्वारा उपभोक्ताओं को लाभ है। 1986 के एक संशोधन द्वारा यह व्यवस्था भी की गई है कि उपभोक्ता व उपभोक्ता संघ इस अधिनियम के अन्तर्गत अपनी शिकायत दर्ज करा सकते हैं।

डिब्बबन्द सामग्री के विषय में इस अधिनियम में विशेष प्रवधान किये गये हैं तथा डिब्बाबन्द सामग्री संबंधित माप तौल मानक नियम

बनाए गये हैं। इन दिनों खाद्य सामग्री एवं अन्य उपभोक्ता वस्तुओं का डिब्बाबंद प्रयोग आसन्न अवस्था में बेचे जाने का चलन है तथा अनेकों वस्तुओं की इस अवस्था में उपलब्धता जोरों पर है। इसी करण उपभोक्ता हित के संरक्षण का प्रश्न उठता है। चूंकि सामग्री डिब्बाबन्द अवस्था में उपलब्ध है अतएवं ग्राहक इसके गुण, संख्या, माप, तौल व प्रकार के विषय में नहीं जान पाता। इसलिए यह आवश्यक है कि डिब्बाबन्द वस्तुओं के निर्माताओं एवं अनेक डीलरों के लिये कुछ स्पष्ट नियम बनाए जाएँ।

काला बाज़ारी अवरोधक एवं आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1980

यह अधिनियम, आवश्यक वस्तु अधिनियम 1955 का ही सम्पूरक है। इस अधिनियम का उद्देश्य काला बाजारियों, जमाखोरों एवं मुनाफाखोरों द्वारा संचालित कतिपय धांधलियों को रोकना है। इसमें निहित दण्डात्मक प्रावधान काफी कठोर हैं।

इस अधिनियम के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों एवं कुछ विशिष्ट अधिकारियों को ऐसे अधिकार दिये गये हैं जिनसे वे उन व्यक्तियों को गिरफ्तार कर सकते हैं जो किसी प्रकार से आवश्यक वस्तुओं की समाज को सप्लाई में बाधा प्रस्तुत करें।

इस प्रावधान के अन्तर्गत किसी व्यक्ति को हिरासत में लिये जाने के छः मास की अवधि तक ही बन्दी रखा जा सकता है।

इसके अन्तर्गत बन्दी व्यक्ति को अधिनियम की धारा 8 के तहत अपने विरुद्ध की गई कार्यवाही का कारण जानने का अधिकार है बशर्ते कि जनहित में इस कारण की गोपनीयता वांछित न हो।

अधिनियम की धारा 16 सहृदय पूर्ण की गई किसी कार्यवाही के प्रति अधिकारियों को सुरक्षा भी प्रदान करती है। केन्द्र सरकार, राज्य सरकारों या किसी अधिकारी द्वारा की गई किसी कार्यवाही के विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाही अथवा मुकदमा इस अधिनियम के अन्तर्गत की गई अथवा की जाने वाली समुचित कार्यवाही के विरुद्ध दायर नहीं किया जा सकता एवं ऐसा करना सर्वथा अमान्य होगा।

9. एम.आर.टी.पी. अधिनियम, 1969 एवं प्रतियोगिता अधिनियम, 2002

एकाधिकार एवं अवरोधक व्यापार व्यवहार (Monopolies and Restructive Trade Practices Act) अधिनियम सन् 1969 में इस आशय के साथ लागू किया गया कि आर्थिक व्यवस्था के कार्यकलाप जनहित के विरूद्ध आर्थिक शक्तियों का संचयन न हो सके। यह अधि नियम एकाधिकार नियन्त्रण एवं एकाधिकार एवं अवरोधक व्यापारिक पद्धतियों को नियंत्रित करने के लिये बनाया गया। बाद में सन् 1984 में अनुचित व्यापार पद्धतियों के विषय में इसमें कुछ और प्रावधान जोड़े गये। तदोपराप्त जब भारत सरकार ने आर्थिक नीतियों का सरलीकरण करने का निर्णय किया तो आर्थिक शक्ति के संचयन सम्बंधित पार्ट A के कुछ प्रावधानों को इस अधिनियम के तृतीय अध्याय से 27.9.1991 में हटा लिया गया। केवल उपक्रमों के विभाजन एवं उपक्रमों के प्रमुख सम्बंधों के विच्छेद का आदेश देने वाले प्रावधान रोक लिये गये मगर इन शक्तियों का शायद ही कभी उपयोग किया गया हो। इन शक्तियों के ह्रास के बाद यह अधिनियम एक दन्तविहीन शेर ही रह गया है तथा अनुचित व्यापार पद्धतियों एवं अवरोधक व्यापार पद्धतियों के कुछेक मामलों में ही इसकी व्यवहारिकता रह गई है।

सम्पूर्ण विश्व में यह माना जाता है कि निजी एकाधिकार राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के प्रतिकूल हो सकता हैं अतः इस पर नियन्त्रण रखना आवश्यक है। अब यह अनुभव हो चला है कि एक स्वस्थ अर्थव्यवस्था के लिये मुक्त एवं उचित प्रतिस्पर्धा जरूरी है।

अधिनियम के प्राक्कथन के अनुसार देश के आर्थिक विकास के मद्देनजर प्रतिस्पर्धा अधिनियम में इस प्रकार की व्यवस्था है कि यह प्रतिस्पर्धा परप्रतिकूल प्रभाव डालने वाली पद्धतियों को रोके, बाजार में प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा दे और सुदृढ़ करे, उपभोक्ताओं के हित कर रक्षा करे तथा भारतवर्ष में अनेक बाजार भागीदारों को व्यापारिक स्वतन्त्रता प्रदान करने संबंधित अन्य पहलुओं को व्यवस्थित करे। इस प्रकार प्रतिस्पर्धा अधिनियम का मुख्य उद्देश्य बाजार में स्वतन्त्र एवं उचित प्रतियोगिता को सुनिश्चित करना है।

यह अधिनियम मुख्यतः निम्न उद्देश्यों के लिये तैयार किया गया है

(क) प्रतिस्पर्धारोधी समझौतों को रोकना

(ख) व्यापारिक शक्ति के दुरुपयोग को रोकना

(ग) व्यापारिक समूहीकरण को संचालित करना

इसके तहत एक अर्ध-न्यायिका प्राधिकरण -'भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग' की स्थापना की जायेगी। इस आयोग को एक विस्तृत स्वरूप देने के लिये इसमें न्यायिक और गैर-न्यायिक सदस्यों की नियुक्ति की जायेगी। किसी शिकायत अथवा संदर्भ की प्राप्ति पर आयोग प्राधिकरण के महानिदेशक को जांच का आदेश दे सकता है। तथा आयोग इस जांच की रिपोर्ट पर दोनों पक्षों के तर्क सुनकर आवश्यक आदेश पारित कर

सकता है। भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग भी बैंचों में विभाजित होकर सुनवाई करेगा तथा प्रत्येक बैंच में कम से कम एक सदस्य हाई कोर्ट न्यायाधीश के स्तर का होगा। आयोग सशक्त व्यापारिक समूहों के विभाजन का आदेश दे सकता है तथा प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण के प्रतिकूल समझौतों एवं समूहीकरण के पुनर्विभाजन एवं भंजन का भी आदेश देने से सक्षम है। आयोग को पर्याप्त शक्तियां दी गई हैं तथा इसके आदेशों के पालन को सुनिश्चित करने के लिये आवश्यक दण्डात्मक प्रावधान किये गये हैं। इसके आदेशों के विरुद्ध सिविल अदालतों का क्षेत्र अवरुद्ध किया गया है तथा महत्त्वपूर्ण कानूनी प्रश्नों की अवस्था में ही सर्वोच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986

उपरोक्त विवरणों से यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि व्यापारिक नियंत्रण के लिये अनेकों कानूनों की व्यवस्था है किन्तु इनमें से किसी को भी उपभोक्तापरक नहीं कहा जा सकता। ये सभी कानून किसी विशेष अवस्था में ही राहत प्रदान करने के लिये रचे गये हैं। इनमें से कोई भी उपभोक्ता अधिकारों की रक्षा के लिये नहीं बना और न ही इनमें उपभोक्ता की शिकायतों के न्यायिका निवारण की व्यवस्था है। इनका मूल मन्त्र 'उपभोक्ता सावधान रहे' था। निसहाय एवं प्रताड़ित उपभोक्ता को कोई चारा नही था। केवल अर्थशास्त्र की पुस्तकों में ही 'उपभोक्ता' शासक बना रहा। वस्तुतः उत्पादक, वितरक एवं व्यापारी का ही बोलबाला था।

परन्तु उपभोक्ता अधिनियम 1986 के पारित होने के उपरान्त ही यह समस्त परिपेक्ष्य बदलता नजर आ रहा है। उपभोक्ता के अधिकारों को वैधानिक मान्यता प्रदान की गई है तथा राष्ट्रीय, प्रान्तीय एवं जिला तीनों

स्तरों पर शिकायत निवारण तन्त्र स्थापित किये गये हैं। उपभोक्ता को एक बार फिर 'राजा' बनाने की तैयारी है। भारतीय संसद ने दिसम्बर 1986 में इसको पारित किया, अप्रैल 1987 से यह लागू हुआ तथा इस अधि नियम की सभी व्यवस्थाएँ जुलाई 1987 से आसन्न कर दी गई।

जैसा कि अधिनियमों के प्राक्कथन में उल्लेख है, इसका उद्देश्य उपभोक्ता हितों का बेहतर संरक्षण करना है। इस अधिनियम के अवतरण के कई वर्ष पहले से ही इस देश के उपभोक्ताओं में यह जागरूकता हो गई थी कि अनेक वस्तुओं एवं सेवाओं के विपणन में उन्हें ठगा जा रहा है जिसमें उत्पादक एवं विक्रेता दोनों ही सम्मलित हैं। इसलिये उपभोक्ता शिकायत निवारण मंचों की आवश्यकता महसूस की जा रही थी। इसी के मद्देनजर बड़े उत्साह के साथ इस अभूतपूर्व कानून को पेश किया गया और लागू कराया गया ताकि उपभोक्ताओं को अनैतिक उत्पादकों तथा व्यापारियों के शोषण से बचाया जा सके। इस अधिनियम के अन्तर्गत राष्ट्रीय, प्रान्तीय एवं जिला आयोगों के रूप में उपभोक्ताओं की शिकायत निवारण के लिये ये त्रि-स्तरीय निवारण तन्त्र स्थापित किये गये हैं जिनको क्रमशः जिला उपभोक्ता मंच, प्रादेशिक आयोग एवं राष्ट्रीय आयोग के रूप में जाना जाता है।

1986 में इस अधिनियम से उत्साहित होकर अनेकानेक उपभोक्ता मृत टेलीफोन, खराब टेलीविजन, अनियमित रसोई गैस सप्लाई, बैकों एवं अस्पतालों में हड़ताल से हुए नुकसान, चिकित्सात्मक धांधलियां, विकृत प्रेशर कुकर, बिजली सप्लाई बाधा से नष्ट हुई फसल की हानि, सेवा प्रदाता के अपूर्ण वादों के विरुद्ध याचिकाओं से इन शिकायत निवारण एजेंसियों पर टूट पड़े।

एक उपभोक्ता के रूप में आपको भी यह अवश्य जानना चाहिये कि

किस प्रकार इस अधिनियम की विभिन्न व्यवस्थाएँ बाजार में आपके दिन-प्रतिदिन के अनुभवों में एक असरदार शस्त्र का काम करेंगी।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के महत्त्वपूर्ण स्वरूप

(1) अधिनियम का उद्देश्य उपभोक्ताओं को विस्तृत एवं बेहतर संरक्षण देना है।

(2) भौगोलिक स्तर पर जम्मू-कश्मीर राज्य के अतिरिक्त यह अधि नियम सारे देश में समान रूप से लागू होता है।

(3) केन्द्र सरकार द्वारा विशेष रूप से अनुसूचित वस्तुओं एवं सेवाओं को छोड़कर इनके दायरे में समस्त वस्तु एवं सेवाएँ आतीं हैं।

(4) यह वास्तव में एक अत्यंत नवीन एवं प्रगतिशील समाज कल्याण कानून है जिसको उपभोक्ताओं का Magna Carta भी कहा जाता है। इस अधिनियम नें उपभोक्ता आन्दोलन को शक्तिशाली बनाया है व गति प्रदान करके विस्तृत, प्रभावशाली जन-सुलभ किया है। प्रताडित भारतीय उपभोक्ताओं में अधिनियम के 1993 एवं 2002 के संशोधनों के द्वारा एक नई आशा का संचार हुआ है। यह एकमात्र कानून है जो सीधे-सीधे बाजार व्यवस्था से जुड़ा है तथा इससे उत्पन्न शिकायतों का निवारण करने में सक्षम है। इसकी विभिन्न व्यवस्थाएँ अत्यन्त व्यापक एवं प्रभावशाली हैं।

वस्तुतः दुनिया के किसी भी कोने में विकसित से विकसित देशों में भी प्रचलित कानूनों की तुलना में यह अधिनियम उपभोक्ताओं को बेहतर संरक्षण प्रदान करता है।

(5) विभिन्न प्रकार के शोषणों के विरुद्ध यह अधिनियम उपभोक्ता को असरदार रूप से दोषपूर्ण सामग्री, असंतोषजनक अथवा त्रुटिपूर्ण सेवा तथा अनुचित व्यापारिक व्यवहार के विरूद्ध संरक्षण प्रदान करता है।

'उपभोक्ता' का अर्थ

इस अधिनियम के अन्तर्गत केवल उपभोक्ता को ही न्याय सुलभ है। अत: हम स्पष्ट रूप से जान लें कि 'उपभोक्ता' का अर्थ है।

धारा 2(1)(d) के अन्तर्गत 'उपभोक्ता' निम्न में से कोई एक हो सकता है:

(1) वह व्यक्ति जो मूल्य अदा करके या अदायगी का वादा करके या किश्तों में भुगतान करने का वादा करके कोई वस्तु खरीदता है। ग्राहक की सहमति से उस वस्तु का उपयोग करने वाला कोई अन्य व्यक्ति भी इसकी परिभाषा में सम्मलित है।

'उपभोक्ता' की श्रेणी में वह व्यक्ति नहीं आता जो किसी वस्तु को पुन: बिक्री अथवा व्यापारिक उद्देश्य से खरीदता है।

(2) वह व्यक्ति जो मूल्य अदा करके अथवा अदायगी का वादा करके या किश्तों में मूल्य अदायगी का वादा करके कोई सेवाएँ उपलब्ध करता है। उपरोक्त अनुसार ही सेवा प्राप्त करने वाले व्यक्ति की सहमति से उसका उपयोग करने वाला अन्य कोई व्यक्ति। परन्तु व्यवसायिक उद्देश्य से इस प्रकार की 'सेवा' लेने वाला व्यक्ति उपभोक्ता की परिभाषा में नही आता।

आजीविका चलाने या स्व-रोजगार के लिये खरीदी गई वस्तु का

उपयोग 'व्यवसायिक उद्देश्य' नही माना जाता (धारा 2(1)(d) की विवेचना।)

अतएवः अधिनियम के अन्तर्गत 'उपभोक्ता' होने के लिये :

(1) वस्तु अथवा सेवा मूल्य देकर या मूल्य अदायगी का वादा करके या किश्तों में मूल्य अदायगी का वादा करके ही खरीदी या उपलब्ध की गई है।

(2) ऐसी वस्तु या सेवाएं पुनः बिक्री या व्यवसायिक उद्देश्य के लिये नहीं होनी चाहिये। अतः यदि कोई वाहन टैक्सी के रूप में चलाने के लिये खरीदा गया है (बशर्ते कि ग्राहक इसका प्रयोग अपनी आजीविका चलाने के लिये करता है) चूंकि इसका व्यवसायिक उद्देश्य है, अधिनियम की धाराओं के अन्तर्गत यह ग्राहक 'उपभोक्ता' नहीं है।

(Western India State Motors v. Subhag Mal Meena and others, 1989)

लाभ प्राप्ति के उद्देश्य से कोई भी आर्थिक गतिविधि अथवा लेन-देन व्यवसायिक उद्देश्य की परिभाषा में ही आयेगा, चाहे वह किसी भी स्तर पर किया जा रहा हो।

एस. पट्टाभिराम विरुद्ध Sp. S.T. पलानिप्पन (दि. 3.5.1994 का आदेश) मामले में राष्ट्रीय उपभोक्ता मंच ने निर्णय दिया कि सुशिक्षित चिकित्सकों की प्राईवेट कम्पनी द्वारा व्यवसायिक उपयोग के लिये खरीदी गई एक्स-रे मशीन का व्यवसायिक उपयोग होने के कारण यह कम्पनी 'उपभोक्ता' की श्रेणी में नहीं आती। दूसरी ओर सिनको टेक्सटाइल्स प्रा.

लि. विरुद्ध ग्रीव्स कॉटन एण्ड कं. लि. (1991) के मामले में राष्ट्रीय आयोग ने माना कि किसी लेन-देन की श्रेणी तय करने का मापदण्ड – कि यह व्यवसायिक उद्देश्य है या नहीं – उसका तत्कालिक उपयोग है जो इस तथ्य से सर्वथा भिन्न है कि दीर्घ काल में इसका क्या स्वरूप व उद्धेश्य होगा तथा लाभ या हानि से इसका क्या सम्बन्ध है। अत: वस्तुओं के वे ग्राहक जो आत्म-उपभोग की इस आर्थिक गतिविधि में सलंग्न है इस अधिनियम के अन्तर्गत उपभोक्ता माने गये हैं। किन्तु पुनर्बिक्री के लिये खरीदे गये डिबेन्चर इस प्रकरण के व्यवसायिक उद्देश्य में गिने जायेंगे।

क्या ये भी उपभोक्ता हैं?

1. लॉटरी विजेता

यह प्रश्न बॉयफोर्ड विरुद्ध एस.एस. श्रीवास्तव (1993) के मामले मे उठा। बॉयफोर्ड मोटर्स ने अखबारों में विज्ञापन दिया कि प्रीमियर पद्मिनी कार बुक कराने वाले ग्राहक उनकी एक लॉटरी में हिस्सा ले सकते हैं। जिनके अनुसार ड्रा में सफल रहे व्यक्ति को दिल्ली से न्यूयार्क आने-जाने की दो मुफ्त टिकट मिलेंगी। श्री श्रीवास्तव ड्रा के सफल व्यक्तियों में थे। उन्होंने मै. बॉयफोर्ड मोटर्स से इन टिकटों के मूल्य की धनराशि माँगी जो कम्पनी को स्वीकार न था। और उनसे दो पासपोर्ट मांगे गये जिससे कि अमरीका की टिकट खरीदी जा सके। शिकायतकर्ता ने एक पासपोर्ट तो तभी उपलब्ध करा दिया किन्तु दूसरा पासपोर्ट वित्तीय वर्ष समाप्त होने के बाद दिया गया। मै. बायफोर्ड मोटर्स ने यह कहकर टिकट देने से मना कर दिया कि पिछले वर्ष के एकाउन्ट वित्तीय वर्ष की समाप्ति पर बन्द कर दिये गये हैं तथा यह राशि इन्कम टैक्स नियमों के अन्तर्गत अगले वर्ष में स्थानान्तरित नहीं की जा सकती। यह माना गया

कि अधिनियम की धारा 2(1)(d) के अनुसार शिकायतकर्ता एक उपभोक्ता की श्रेणी में नहीं आता क्योंकि उसने पैसे के बदले कार ले ली जिसके विषय में कोई शिकायत नहीं थी।

न्यूर्याक का टिकट बिक्री से जुड़ा हुआ एक अतिरिक्त आकर्षण था जिसका निर्धारण लॉटरी द्वारा होना था। यह उस लेन-देन का हिस्सा नहीं था जिसका मूल्य अदा किया गया था। अत: जहाँ तक लॉटरी का सम्बंध है ऐसा नही कहा जा सकता कि शिकायतकर्ता एक उपभोक्ता था जिसने मूल्य अदा करके कोई सेवा प्राप्त की हो, अत: उसे अधिनियम के अन्तर्गत किसी निवारण का अधिकार न था। शिकायतकर्ता का यह तर्क कि यह मामला एकाधिकार एवं अवरोधी व्यापार पद्धति अधिनियम 1961 (MRTP Act 1969) की धारा 36A(4) के अन्तर्गत आता है, माना नहीं गया।

2. गैस कनेक्शन के लिये पंजीकृत व्यक्ति

महेन्द्र गैस एन्टरप्राइजेस बनाम **जगदीश प्रसाद** (1992) में राष्ट्रीय आयोग ने माना कि गैस कनेक्शन के लिये पंजीकरण सेवा प्राप्ति के अन्तर्गत आयेगा। इसमें इन्डियन ऑयल कारपोरेशन के मैनुअल को सन्दर्भ लिया गया जो कहता है कि रसोई गैस उपभोक्ता कारपोरेशन के साजो सामान, सिलेन्डर, तकनीकी सहायता व उपकरण के रखरखाव जैसी सेवाओं को सतत एवं आवर्ती रूप से प्राप्त करता रहेगा। परन्तु यहाँ प्रश्न यह था कि क्या केवल उपभोग वाउचर पर हस्ताक्षर करने व रसाई गैस कनेक्शन के लिये अग्रिम राशि जमा करने मात्र से कोई व्यक्ति उपभोक्ता बन जाता है। इस विषय में राष्ट्रीय आयोग ने निम्न व्यवस्था दी –

धारा 2 की उपधारा (1) एवं उप-नियम (D) के अन्तर्गत 'सेवा' का अर्थ है ''किसी भांति की सेवा जो भावी उपभोक्ताओं को उपलब्ध कराई जाती है।'' सेवा प्राप्त करने वाले उपभोक्ता की परिभाषा अधि नियम की धारा 2(1) के नियम (ii) में दी गई है जिसके अनुसार यह आवश्यक नहीं है कि सेवाएँ प्राप्त करने के समय ही मूल्य अदा किया जाये। यदि इस लेन-देन में इस प्रकार का आशय है कि मूल्य अदायगी या अदायगी का वादा पूर्ण रूप से, किश्तों में कालान्तर में किया जा सकता है तब यह माना जायेगा कि इस लेन-देन में अदायगी सम्पन्न हो गई है। इस मामले में मूल्य का कुछ अंश कनेक्शन वितरित होने के बाद तक के लिये लम्बित है। अत: रसोई गैस का कनेक्शन पंजीकरण कराने के समय से ही उपभोक्ता हो जाता है।

3. मुफ्त सेवा की वारन्टी

विश्व ज्योति प्रिन्टर्स बनाम **मॉलिन्स ऑफ इन्डिया** (1992) मामले में एक प्रिन्टिंग प्रैस की बिक्री के साथ एक वर्ष की मुफ्त सेवा प्रदान की गई थी। मशीन के विक्रेता ने तर्क रखा कि क्योंकि वह एक वर्ष की रखरखाव सेवा मुफ्त प्रदान कर रहा है अत: इस सेवा के विषय में खरीदार को उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत 'उपभोक्ता' नहीं माना जा सकता।

परन्तु अदालत ने माना कि मुफ्त सेवा वारंटी मशीन की आपूर्ति एवं इस एक वर्ष के रखरखाव के मिश्रित अनुबन्ध का हिस्सा थी। स्पष्ट रूप से वारन्टी के अन्तर्गत दी जाने वाली सेवा का मूल्य भी मशीन के विक्रय मूल्य में सन्निहित है। बिना मूल्य के, वारंटी सहित कोई अनुबन्ध नहीं हो सकता। अत: यह मानना त्रुटिपूर्ण होगा कि वारंटी बिना किसी मूल्य के प्रदान की जानी थी।

4. रेलगाड़ी के यात्रीगण

महाप्रबंधक बनाम **आनन्द प्रकाश सिन्हा** (1989) मामले में यह माना गया कि रेलगाड़ी में यात्रा कर रहे व्यक्ति चूंकि एक निर्धारित मूल्य अदा करके टिकट खरीदते हैं अत: वे उपभोक्ता हैं और रेल विभाग द्वारा दी जा रही परिवहन सुविधा अधिनियम में परिभाषित 'सेवा' के अन्तर्गत आती है।

5. टेलीफोन उपभोक्ता

अधिनियम में निहित परिभाषाओं के अन्तर्गत टेलीफोन धारक 'उपभोक्ता' माने जायेंगे तथा निर्धारित उपभोक्ता अदालत में न्याय पाने के हकदार होंगे। [**जिला टेलीफोन प्रबंधक, पटना** बनाम **ललित कुमार बैजला** (1989)]

6. विद्युत उपभोक्ता

बिजली का उपभोक्ता भी एक उपभोक्ता है **वाई.एन. गुप्ता** बनाम **डेसू** (16.11.1992 को निर्णित) मामलों में राष्ट्रीय आयोग ने डेसू द्वारा शिकायतकर्ता को बढ़-चढ़ कर दिये गये बिल के विरुद्ध एक शिकायत को सुना। इस मामले में डेसू ने साधारण बिलिंग चक्र के अनुसार बिल नहीं दिया तथा इसने अपने दोषपूर्ण मीटर को भी नहीं बदला। ऊपर से इसने डेढ़ साल का 1 लाख 6 हजार रुपये का बिल थमा दिया। बिजली का कनेक्शन भी काट दिया गया जो कि महाप्रबन्धक को शिकायत के बाद जोड़ दिया गया था।

7. सरकार द्वारा मनोनीत व्यक्ति को फ्लैट का आबंटन

ए.एम. घेवड़े बनाम ढ़ोंडीराम सलोन्खे (6.10.1995 को निर्णित)

मामले में महाराष्ट्र सरकार की एक योजना के अन्तर्गत जिन लोगों के पास सीलिंग सीमा से अधिक भूमि थी समाज के कमजोर वर्ग के लिये आवासीय कॉलोनी बनाने का अधिकार दिया और इन मकानों में सरकार अपने मनोनीत व्यक्तियों को भी आवास का आबंटन कर सकती थी। प्रतिवादी ने अपनी शहरी भूमि पर मकान बनाये जिनमें से एक मकान वादी को भी आबंटित किया गया था किन्तु इस मकान में कुछ खामियाँ थी। प्रतिवादी ने अपने विरोध में कहा कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की परिभाषा में यह वादी उपभोक्ता नहीं है एवं राज्य कमीशन ने वादी की यह शिकायत निरस्त कर दी।

राष्ट्रीय उपभोक्ता आयोग ने निर्णय दिया कि महाराष्ट्र शहरी भूमि परीसीमन अधिनियम के अन्तर्गत सरकार का मनोनीत व्यक्ति निश्चय ही सेवा का उपभोक्ता है। सरकार ने कॉलोनी निर्माता की सेवाएँ भले ही न ली हों किन्तु निर्माता के ऊपर कमजोर वर्ग के लिये मकान बनाने का जिम्मा था और इसका आबंटन सरकार के द्वारा होना था। मनोनीत व्यक्ति ने फ्लैट की कीमत अदा की और चूँकि कॉलोनी निर्माता ने भी यह कीमत वसूल की है अत: मनोनीत सरकार द्वारा ली गई सेवा का पात्र था।

8. नगर निगम द्वारा बनाई गयी सीवर प्रणाली का उपयोग :

प्रकाशवती बनाम **भटिण्डा म्यूनिसपैलिटी** (1993) CCJ 354 में यह निर्णय दिया गया कि चूँकि नगर पालिका की सीवर सेवाओं का उपयोग करने के लिये जल एवं सीवर शुल्क अदा किया जाता है अत: इन सेवाओं को प्राप्त करने वाला भी उपभोक्ता है।

सिग्नेट कॉरपोरेशन बनाम **आयुक्त, दिल्ली नगर निगम** (19 मई 1997 का निर्णित) में राष्ट्रीय आयोग ने माना कि अधिनियम के अन्तर्गत

नगर निगम की नालों की सफाई व उचित देखभाल करने की वैधानिक जिम्मेदारी में असफलता के ऊपर शिकायत नहीं दर्ज की जा सकती। नालों का निर्माण, देखरेख, सफाई व कूड़े, करकट व अन्य प्रदूषित पदार्थों को हटाने का कार्य निगम के वैधानिक उत्तरदायित्व के निर्वाह का एक भाग है। इस व्यवस्था को निगम व किसी एक व्यक्ति के बीच सेवा अनुबन्ध नहीं माना जा सकता।

नागरिकों से अपने सार्वभौमिक उत्तरदायित्वों के अन्तर्गत वसूल किया जमा कर किसी सेवा या प्रस्तावित सेवा का अनुबन्ध दूर-दूर तक भी नहीं माना जा सकता।

स्वयं के व्यवसाय में प्रयोग करने वाले उपकरण का क्रेता :

कोडी एल्कॉट लि. बनाम **डा. सी.पी. गुप्ता** (19.9.95 को निर्णित) में शिकायतकर्ता जो कि पेशे से चिकित्सक था, के द्वारा खरीदी हुई अल्ट्रासाडन्ड मशीन ने थोड़े ही समय में कार्य करना बन्द कर दिया। विक्रेता ने तर्क दिया की ग्राहक स्वयं मशीन का उपभोक्ता नहीं था और उसने अपने व्यवसायिक कार्य के लिये इसे खरीदा तथा इससे लाभ अर्जित कर रहा था। किन्तु वादी ने कहा कि वह अपनी व्यक्तिगत दक्षता से मशीन को चलाता है और यह उसकी आजीविका का साधन है। राष्ट्रीय आयोग ने निर्णय दिया :

लाभ का प्रश्न गौण नहीं है। प्रश्न यह है कि क्या उपभोक्ता द्वारा खरीदी गई वस्तु का वह स्वयं उपयोग कर रहा है। अपीलकर्ता ने ऐसा कोई साक्ष्य नहीं दिया है कि शिकायतकर्ता मशीन को स्वयं प्रयोग नहीं कर रहा हैं जबकि शिकायतकर्ता के शपथ-पत्र से यह स्पष्ट है कि स्कैनर का उपयोग उसकी दक्षता से ही हो रहा है तथा वह इससे अपनी

आजीविका चला रहा है। अत: वह उपभोक्ता है। मशीन विक्रेता को स्कैनर का मूल्य लौटाने का आदेश दिया गया।

क्या एक नवजात मरीज के माता-पिता उपभोक्ता हैं :

स्प्रिंग मीडोज़ हास्पीटल बनाम हरजीत अहलूवालिया (1998) 2 SCALE, 456 में उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि क्या किसी मामले में उपभोक्ता विवाद है? एवं कौन उपभोक्ता हैं? इन दोनों प्रश्नों में एक प्रत्यक्ष संबन्ध है। उच्चतम न्यायालय ने माना कि किसी प्रकार की सेवाओं का उपयोग करने वाला उपभोक्ता है और इन सेवाओं का पात्र भी। इसलिये जब किसी छोटे बच्चों को उसके माता-पिता अस्पताल ले जाते हैं व कोई डाक्टर उसका उपचार करता है तो माता-पिता तो उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की धारा 2(1)(d) के अन्तर्गत 'उपभोक्ता' हैं ही वह बच्चा भी अधिनियम की विस्तृत परिभाषा के अन्तर्गत 'पात्र' होने के कारण उपभोक्ता बन जाता है।

भविष्य निधि का सदस्य

भविष्य निधि आयुक्त बनाम **शिव कुमार जोशी** (1999) AIR SCW 4456 में उच्चतम न्यायालय ने माना भविष्य निधि आयुक्त द्वारा भविष्य निधि का प्रबन्धन एक सेवा है तथा इस योजना का प्रत्येक सदस्य एक उपभोक्ता है।

'दोषपूर्ण सामग्री' एवं 'सेवा में कमी' की परिभाषा :

दोषपूर्ण सामग्री : तत्कालीन नियम, विनयमों एवं कानून के अन्तर्गत वस्तुओं की गुणवत्ता, माप, असर, शुद्धता या मापदण्डों में त्रुटि, अपूर्णता अथवा कमी – जो विक्रेता द्वारा किये गये दावे के अनुरूप या अनुसार नहीं – वस्तु अथवा सामग्री में, 2(1)(f) के तहत दोष माना गया है।

यह एक विस्तृत परिभाषा है, अर्थात् इस परिभाषा में सम्मलित दोषों को ही यह अधिनियम मान्यता देता है। इसमें उल्लिखित दोषों के अतिरिक्त अन्य किसी दोष पर उपभोक्ता अदालत कार्यवाही करेंगी। विशेषकर यह दोष केवल वस्तुओं के सन्दर्भ में ही मान्य है, यानि, यदि कोई सामग्री उपभोक्ता परिभाषा में नहीं आती तो उसके बारे में कोई शिकायत दर्ज नहीं हो सकती।

इस अधिनियम में 'वस्तुओं' की वही परिभाषा है जो वस्तु बिक्री अधिनियम, 1930 में दी गई है।

तदानुसार 'वस्तु' का आशय कोई भी चल सम्पत्ति है (करेन्सी के अतिरिक्त) तथा इसमें माल तथा शेयर, उगी हुई फसल, घास या ऐसी चीजें जो जमीन से जुड़ी हैं तथा जिन्हें बिक्री या बिक्री अनुबन्ध से पहले हटाया या काटा जा सकता है शामिल हैं।

क्या आबंटन से पहले शेयर 'वस्तु' है :

मॉरगन स्टेनले म्यूचुअल फण्ड बनाम कार्तिक दाम (1994) में उच्चतम न्यायालय ने माना कि आबंटन से पहले शेयर अस्तित्वहीन हैं। आबंटन के उपरान्त ही अनुबन्ध की शर्तों के अनुरूप इन पर अधिकार अस्तित्व में आता है और किसी भी अवस्था में आबंटन से पूर्व नहीं।

एक राशन की दुकान ने राशन कार्ड धारक को ज्ञात विषैले पदार्थ से अपमिश्रित रेपसीड तेल बेच दिया। जिसके उपभोग के कारण शिकायतकर्ता व उसका परिवार भीषण रूप से प्रभावित हुआ। वह धड़ से नीचे लकवाग्रस्त हो गया एवं लम्बे उपचार के बाद भी पूर्णत: स्वस्थ न हो पाया। इस पक्षाघात के फलस्वरूप लम्बे उपचार के बाद भी उसकी पत्नि ठीक न हो पाई व अपने घरेलू कामकाज भी न कर पाती थी।

मेडीकल रिपोर्ट के अनुसार उसकी दो पुत्रियां एवं एक पुत्र भी इसका गंभीर शिकार बने और उनकी पढ़ाई भी चौपट हो गई इन सब तथ्यों के मद्देनजर आयोग ने शिकायतकर्ता को 1,50,000 रुपये उसकी पत्नि को 50,000 रुपये व प्रत्येक बच्चे को 25,000 रुपये का मुआवजा दिलाया अर्थात् कुल 2,75,000 रूपये दिलाये गये (**बरसद अली** बनाम **मैनेजिंग डायरेक्टर, वेस्ट बंगाल आवश्यक वस्तु आपूर्ति निगम** 1993, CCJ 476

इसी प्रकार घरेलू बिजली उपकरण जो कि भारतीय मानक संस्थान (ISI) के मानकों के अनुरूप नहीं बने हैं दोषपूर्ण हैं (फारूक हाजी इस्माइल साया बनाम आवाभाई भेसानिया (1991) 2 CPJ 452 (गुजरात)

दोषपूर्ण सामग्री के अन्य उदाहरण :

(1) **अधिक मात्रा में भरा हुआ गैस सिलेंडर** – दयानन्द अवसारे बनाम भारत पेट्रोलियम कार्पो. लि. (1993) ICPR 278

(2) **पॉलिश के बाद रंग बदलने वाला संगमरमर** – **चितरंजन साहू** बनाम **एन.सी. जैन** (1993) CPJ 1127 (उड़ीसा)

(3) **असफल ई.पी.वी.ए.एक्स. प्रणाली** – एच.सी.एल. ऑफिस आटोमेशन लि. कन्ज्यूमर एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च सोसाइटी (2004) CPJ 63 (NC)

(4) **उत्पादन दोषपूर्ण ऑटोरिक्शा** – **मै. स्कूटर्स इन्डिया लि.** बनाम **माधब नन्द मोहन्ती व अन्य** (राष्ट्रीय आयोग द्वारा 7.2. 2003 को निर्णित)

(5) **एयरकन्डीशनर का फटना व आग लगना** – योगेश भाई श्रीध

र बनाम कन्ज्यूमर एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च सोसाइटी CPJ 63 (NC)

(6) **ठीक प्रकार से न अंकुरित हुऐ बीज** – एन. शंकर शास्त्री बनाम कृषि उप-निदेशक, कर्नाटक (2004) CPJ 37 (SC)

सेवा में कमी :

वस्तुओं के दोषों के अनुरूप ही सेवाओं में कमी महत्त्व का विषय है। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के अनुसार सेवा की गुणवत्ता, प्रकार व कार्य क्षमता में ऐसी कमी, त्रुटि, दोष व अपूर्णता जो तत्कालीन कानूनों व सेवा प्रदाता द्वारा सहमत अनुबन्ध या अन्य शर्तों के अनुरूप न हो – अधिनियम की धारा 2(1)(g) के अनुसार कमी मानी जायेगी।

सेवा में कमी के विषय में अनेकों अदालती आदेश उपलब्ध हैं। इनमें कुछेक का उल्लेख इस प्रकार है–

1. **मैना देवी बैरलइया** बनाम **भारतीय जीवन बीमा निगम** (राष्ट्रीय आयोग द्वारा 11.5.1993 को निर्णित) में मैना देवी के पति ने 50,000 रुपये का जीवन बीमा कराया परन्तु दूसरी किश्त से पहले ही वह अचानक बीमार हुआ और चल बसा। मृतक की पत्नि मैना देवी द्वारा दायर रकम के दावे को 14 वर्ष तक स्वीकार नहीं किया गया। उसके कष्टों का अखबारों में प्रकाशन के उपरान्त एवं कुछ संसद सदस्यों द्वारा संसद में इस मामले को उठाये जाने के बाद मैना देवी को 50,310 रुपये का चैक भेज दिया गया।

   राष्ट्रीय आयोग के सम्मुख प्रस्तुत वाद में यह माना गया कि निगम अपनी सेवाओं में अत्याधिक अकर्मण्य है। निगम द्वारा सेवा में

कमी के कारण शिकायतकर्ता मैना देवी को कठिनाइयों को सामना करना पड़ा। मैना देवी को बीमित पति की मृत्यु के तीन महीने बाद से चैक मिलने की तारीख तक 12.5% वार्षिक दर से ब्याज पाने का अधिकारी माना गया। मानसिक उत्पीड़न व तंग करने की एवज में आयोग ने उसे 15,000 रुपये का मुआवजा भी दिलाया।

2. अजमेर सिंह, कॉटन एण्ड जनरल मिल्स बनाम मैनेजर, न्यू इंडिया इन्श्योरेंस कम्पनी व अन्य (राष्ट्रीय आयोग द्वारा 13.4. 1993 को निर्णित) प्रार्थीगण कपास ओटने व शोधन का व्यवसाय करते थे और उन्होंने अपने कपास के गोदाम का दो कम्पनियों से बीमा कराया हुआ था। एक भीषण अग्निकाण्ड में उनका लगभग सारा स्टाक जल गया। दोनों कम्पनियों ने क्रमशः नौ महीने व एक वर्ष बाद दावे का निपटान किया।

आयोग ने माना कि दावा तय करने के लिये पर्यवेक्षक की रिपोर्ट आने के बाद दो महीने का समय काफी है। चूँकी इसके लिये नौ महीने व एक साल का समय अनावश्यक रूप से देरी है अतः प्रार्थी को सर्वेक्षण की रिपोर्ट आने के दो माह के बाद से 18 प्रतिशत वार्षिक का ब्याज दिलाया गया।

3. **जिला टेलीकॉम मैनेजर** विरुद्ध **उमेश चन्द्र पटनायक** (15.3. 1993 को निर्णित) इस मामले में शिकायतकर्ता ने आरोप लगाया कि उसको नियमित रूप से टेलीफोन के बिल नहीं भेजे जाते थे और भुगतान न हो पाने के कारण टेलिफोन काट दिया गया।

उपभोक्ता अदालत ने निर्णय दिया कि चूँकि भारतीय टेलीग्राफ एक्ट में बिलों को रजिस्टर्ड डाक द्वारा भेजे जाने का कोई प्रावध

ान नहीं है अत: टेलीफोन विभाग को इस कारण से सेवा में कमी का दोषी नही माना जा सकता।

4. **स्काइपैक कोरियर्स प्रा. लि. व अन्य** विरुद्ध **सुश्री अनुपमा बागला** (1992)

इस मामले में कोरियर सर्विस द्वारा समय पर एक विडियो कैसेट न पहुँचाने के कारण प्रार्थी को इच्छित कॉलेज में प्रवेश न मिल पाया अत: कोरियर को सेवा में 'कमी' का दोषी पाया गया जिसके कारण प्रार्थी को गंभीर कठिनाई का सामना करना पड़ा। अत: शिकायतकर्ता को 10,000 रुपये का मुआवजा दिलाया गया।

5. **स्काइपैक कोरियर्स** विरुद्ध **सी.ई.आर.एस. व अन्य** (1992) के एक अन्य मामले में भी शिकायतकर्ता के पासपोर्ट, वीसा व हवाई टिकट के न पहुँचने के कारण 1,000 रुपये की क्षतिपूर्ति देने का आदेश दिया गया।

6. लखनऊ विकास प्राधिकरण विरुद्ध रूप किशोर टंडन मामले में आवास बोर्ड द्वारा आबंटन किये जाने, मूल्य प्रति तथा शिकायतकर्ता के पक्ष में पंजीकरण कराये जाने के बाद भी मकान का कब्जा न दिये जाने के कारण सेवा में कमी का दोषी पाया गया।

7. **स्पेशल मशीन** विरुद्ध **पंजाब नेशनल बैंक** (1989) - इस मामले में एक लघु स्तरीय उद्योग को केवल वित्तीय सहायता और पोषण न दिया जाना जिसके कारण उक्त उपक्रम की स्थिति डावाडोल हो गई, सेवा में कमी नहीं माना गया। अदालत ने माना कि वित्तीय ऋण को जारी करना या रोकना या मार्जिन राशि नियत करने के मामले में बैंक का अपने विवेक का प्रयोग करने का

अधिकार है तथा ऐसी स्थिति में निर्णय अनेकों संबंधित तथ्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है। ऐसे मामलों में वादी सिविल अदालत में जा सकता है।

8. **एयरपैक कोरियर लि.** विरुद्ध **एस. सुरेश** (11.3.1993 का निर्णित) कुछ महत्त्वपूर्ण दस्तावेजों का एक पैकेट उक्त कोरियर फर्म को दिया गया था जो कि अपने गन्तव्य तक नहीं पहुँचा। राज्य आयोग ने माना कि यह सेवा में अपर्याप्त का मामला है और इस हानि के लिये एक लाख रुपये क्षतिपूर्ति का आदेश दिया।

परन्तु अपील में अपीलकर्ता का कहना था कि प्रेषक ने कोरियर की शर्त व नियमों से सहमति जताई थी जिनके अनुसार फर्म की जिम्मेदारी केवल 100 रुपये अदा करने तक की है तथा आई.ए.टी.ए. के विनयमों के अनुसार महत्त्वपूर्ण दस्तावेज कोरियर से न भेजे जायें। चूँकि समान यात्रा के दौरान खोया था अत: क्षतिपूर्ति की सीमा केवल 100 रुपये मात्र ही है। समान भेजने से पहले प्रेषक को इसके बारे में जानकारी देनी होती है। इस मामले में सामान बुक कराते समय उसके मूल्य का खाना खाली छोड़ा हुआ था।

राष्ट्रीय आयोग ने निर्णय दिया कि यदि दस्तावेज इतने बेशकीमती थे तो प्रेषक को उतना बीमा करवाना चाहिये था। केवल यह ही नहीं उनके मूल्य का खुलासा भी नहीं किया गया था। यह स्पष्ट नही होता कि दस्तावेजों के गुम होने की सूचना पाकर भी उनकी फोटोकॉपी क्यों नहीं भेजी गई। अत: राज्य आयोग द्वारा निर्धारित क्षतिपूर्ति तर्कसंगत नहीं है। चूँकि यह सेवा में अपर्याप्तता का मामला नहीं बनता अत: केवल 100 रुपये क्षतिपूर्ति देने का आदेश दिया गया।

9. **प्रेसीडेन्सी पोस्ट मास्टर, जनरल पोस्ट ऑफिस** विरुद्ध **शंकर** (1993)अपने अस्पताल की पन्द्रहवीं वर्षगांठ के अवसर पर शिकायतकर्ता ने, जो कि एक हस्पताल का मेडिकल डायरेक्टर भी था, सेन्ट्रल पोस्ट ऑफिस, मद्रास में 600 निमंत्रण पत्र पोस्ट किये केवल 200 व्यक्तियों ने ही समारोह में भाग लिया। पता लगा कि अधिकतर लोगों को समारोह की तिथि के पश्चात् ही निमंत्रण पत्र मिले। शिकायतकर्ता ने सेवा में कमी के लिये डाक विभाग से 75,000 रुपये की क्षतिपूर्ति माँगी।

विभाग का कहना था कि यह देरी किसी ने जान बूझकर नहीं की अत: पोस्ट ऑफिस एक्ट 1898 की धारा 6 के अनुसार वे किसी क्षतिपूर्ति देने को बाध्य नही है।

अदालत ने माना कि पोस्ट ऑफिस एक्ट 1898 की धारा 6 के अनुसार चूँकि किसी धोखाधड़ी या जान बूझकर किये गये कार्य के अनुसार इस देरी, नुकसान या गलत वितरण का दावा नहीं किया गया है अत: यह वाद स्वीकार्य नहीं है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 की धारा 3 में स्पष्ट उल्लेख है कि इस अधिनियम की व्यवस्थाएँ किसी अन्य कानून की व्यवस्थाओं के अतिरिक्त है न कि उनके विपरीत व सर्वोपरि। इसका आशय है कि यह अधिनियम उपभोक्ता को न्याय दिलाने का एक अतिरिक्त साधन है परन्तु यदि इस प्रकार का निर्णय किसी अन्य कानून द्वारा बाधित है तो इस अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित विभिन्न मंच इस प्रकार याचित निर्णय नहीं दे सकते।

10. **इन्डियन ऑयल कारपोरेशन लि.** विरुद्ध **वेंकटरमण** (18.12.1992 को निर्णित) इस मामले में राज्य आयोग एवं राष्ट्रीय आयोग दोनों ने माना कि दोषपूर्ण वाल्व का सिलेन्डर सप्लाई करना एवं कम्पनी के डिलीवरी मैन द्वारा डिलीवरी के समय इस दोष को पकड़ने में असफलता सेवा में कमी का मामला है। तदानुसार इन्डियन ऑयल कारपोरेशन को खराब वाल्व से गैस रिसाव से लगी आग से जान-माल की हानि की क्षतिपूर्ति का जिम्मेदार माना गया और मुआवजे के रूप में 1,50,000 रुपये देने का आदेश दिया गया।

11. **स्टेट बैंक ऑफ इंडियन** विरुद्ध **एन. रवीन्द्रन नायर** (3.8.1992 को निर्णित) स्टेट बैंक ऑफ ट्रावन्कोर ने स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, सूरत के पक्ष में 98,000 रुपये का एक ड्राफ्ट जारी किया। जब यह ड्राफ्ट नामित बैंक की शाखा में प्रस्तुत किया गया तो इस आधार पर इसके भुगतान से मना कर दिया गया कि ड्राफ्ट पर हस्ताक्षर करने वाले एक अधिकारी के विषय ने यह उल्लेख नहीं था कि उसने किस क्षमता में ड्राफ्ट पर हस्ताक्षर किये हैं।

    अदालत ने माना कि भुगतान से मना करना सेवा में कमी का विषय है तथा ग्राहक को हुई असुविधा व हानि के लिये बैंक उत्तरदायी है।

12. **एस.पी. धावस्कर** विरुद्ध **आवास आयुक्त, कर्नाटक आवास बोर्ड** (27.9.1995 को निर्णित) शिकायतकर्ता ने 1.66 लाख रुपये का भुगतान कर कर्नाटक आवास बोर्ड से एक मकान बुक कराया। पाँच वर्ष बाद आवास बोर्ड ने सूचना दी कि मकान का निर्माण अपेक्षित स्तर तक नहीं हो पाया है अत: शिकायतकर्ता या

तो बिना ब्याज के अपना पैसा वापिस ले ले या नये मकान के लिये स्वीकृति दे। शिकायतकर्ता ने 4.65 लाख रुपये का दावा किया।

राज्य उपभोक्ता आयोग ने निर्णय दिया कि आवास बोर्ड का आचरण सेवा में अपर्याप्तता का विषय है तथा बिना ब्याज के पैसा लौटाना अत्यन्त अवांछनीय है अत: 18 प्रतिशत सालाना ब्याज देने का आदेश दिया। राज्य आयोग ने कर्नाटक आवास बोर्ड का यह तर्क कि ब्याज का भुगतान बोर्ड के नियमों और विनयमों से परे है व शिकायतकर्ता किसी ब्याज पाने का हकदार नहीं है सिरे से निरस्त कर दिया तथा बाद में बोर्ड की इस निर्णय के विरुद्ध अपील को राष्ट्रीय आयोग ने भी ठुकरा दिया ।

13. **पंजाब जल प्रदाय व सीवेज बोर्ड** विरुद्ध **उदयपुर सीमेंट वर्क्स** (1996) 6 SCALE 327। इस वाद में प्रतिवादी ने सीमेन्ट की आपूर्ति में ढ़ाई वर्ष से भी अधिक की देरी कर दी। एक शिकायत के उपरान्त राष्ट्रीय आयोग ने माना कि क्रय-विक्रय के इस लेन-देन में सेवा में कमी का आशय नहीं उत्पन्न होता और जब तक आपूर्ति किये गये माल में किसी प्रकार का दोष न पाया जाय उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत कार्यवाही नही की जा सकती।

अपील करने पर उच्चतम न्यायालय ने इसे फिर से राष्ट्रीय आयोग में सुनवाई के लिये भेज दिया। उच्चतम न्यायालय ने माना :

हम राष्ट्रीय आयोग की इस सर्वव्यापी धारणा से सहमत नहीं है कि चूँकि यह व्यवहार क्रय-विक्रय संबंधित है अत: सेवा में कमी

का मूलभूत प्रश्न उत्पन्न नहीं होता तथा इसके लिये उपभोक्ता मंच के न्याय क्षेत्र का आश्रय इसलिये नहीं लिया जा सकता क्योंकि आपूर्तित वस्तु किसी दोष से ग्रसित नहीं है। राष्ट्रीय आयोग का यह निरस्त आदेश यन्त्रचलित प्रतीत होता है। दोनों पक्षों के अभिवक्ताओं ने धारा 2(c), (d), (f), (g), (o), व अन्य प्रावधानों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। राष्ट्रीय आयोग को दोनों पक्षों द्वारा अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों के प्रकाश में रखी गई दलीलों पर ध्यान देना चाहिये था।

14. **निवृति जी. मोरे** विरुद्ध **डा. विनायक देशमुख** (1995) CCJ 981। एक चिकित्सक द्वारा गंभीर रूप से रोगियों के उपचार की समुचित वैकल्पिक व्यवस्था किये हुऐ शहर से बाहर जाने को सेवा में कमी का मामला पाया गया। अत: उसकी अनुपस्थिति में एक अयोग्य कम्पाउंडर द्वारा दी गई दवा के कारण मरीज की मृत्यु का उत्तरदायी उस चिकित्सक का माना गया।

15. **एच.पी. गुप्ता** विरुद्ध **दिल्ली नगर निगम** (1995) CCJ 349। अगस्त 1992 में शिकायतकर्ता को दिल्ली नगर निगम के सहायक निर्धारक एवं कलेक्टर से गृह कर के बकाया 1,72,771 रुपये 31. 3.92 तक जमा करने का नोटिस प्राप्त हुआ। शिकायतकर्ता के कई पत्रों, जिसमें उसने गृह कर की किसी बकाया रकम होने से इंकार किया, पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। इसके बजाय उसे एक और बिल प्राप्त हुआ एवं उसके द्वारा उठाई गई आपत्तियों का कोई उत्तर नहीं दिया गया। संबद्ध अधिकारी ने उसके बैंक खातों को अवरुद्ध करने का आदेश दे दिया तथा बैंक ने खातों पर रोक लगा दी।

कई नोटिसों एवं स्थगनों के बाबजूद निगम का कोई प्रतिनिधि आयोग के सम्मुख प्रस्तुत नहीं हुआ।

राज्य आयोग ने व्यवस्था दी :

शिकायतकर्ता द्वारा आरोपित तथ्य सत्य प्रतीत होते हैं। उसके पत्रों के बावजूद निगम ने बिना मामले की समुचित छानबीन के शिकायतकर्ता के बैंक खातों पर रोक लगा दी। यद्यपि बाद में खातों को बहाल कर दिया गया, आयोग ने इसे सेवा में अपर्याप्तता का विषय माना तथा 5000 रुपये क्षतिपूर्ति देने का आदेश दिया।

16. **पंजाब नेशनल बैंक** विरुद्ध **तेज राजिन्दर सिंह** (1997) CCJ 1165। बैंक ने दो फिक्स डिपॉजिट दो व्यक्तियों के संयुक्त नाम में 'कोई एक अथवा उत्तरजीवी' आधार पर जारी की। संयुक्त धारकों में से एक की मृत्यु होने पर दूसरे जीवित नामित व्यक्ति ने बैंक से भुगतान माँगा। बैंक ने इस आधार पर भुगतान करने से मना कर दिया कि मृत व्यक्ति ने एक कम्पनी के ऋण के मामले में गारंटी दी हुई थी तथा इससे संबंधित एक वाद सिविल अदालत में लम्बित है। शिकायत को उचित ठहराते हुऐ जिला उपभोक्ता मंच ने माना कि संयुक्त धारकों में से एक ही मृत्यु हो जाने पर जीवित शिकायतकर्ता को 'उत्तरजीवी' माना जायेगा तथा वह दोनों फिक्स डिपाजिट्स का अकेला स्वामी है एवं पूरा भुगतान पाने का अधिकारी है। मंच ने यह भी स्पष्ट किया कि मृत व्यक्ति ने फिक्स डिपाजिट की रकम को गिरवी नही रखा था। जिला उपभोक्ता मंच एवं राज्य आयोग दोनों ने यह माना कि फिक्स डिपाजिट्स के विषय में शिकायतकर्ता का पूर्ण स्वामित्व है तथा परिपक्व होने पर भुगतान करने से मना करना

बैंक की सेवा में कमी का मामला है।

राष्ट्रीय आयोग ने जिला मंच और राज्य आयोग के निर्णय को उचित ठहराते हुए कहा कि भुगतान के निर्देशों में 'कोई एक अथवा उत्तरजीवी' को स्पष्ट उल्लेख है। संयुक्त धारक की मृत्यु के पश्चात् शिकायतकर्ता उत्तरजीवी होने के कारण फिक्स डिपाजिट्स का पूर्ण स्वामी है। दोनों उपभोक्ता मंचों का निर्णय सही है कि शिकायतकर्ता फिक्स डिपाजिट्स का स्वामी है तथा उसकी शिकायत को उचित ठहराते हुऐ बैंक द्वारा भुगतान न करना सेवा में कमी है।

17. **सुरेश मेहरा** विरुद्ध **पंजाब एण्ड सिन्ध बैंक** (1997) CCJ 1252 (दिल्ली)।

राज्य आयोग ने माना कि एक संयुक्त बैंक खाते को बिना दोनों खाता धारकों की सहमति के, केवल एक खाता धारक के निर्देश पर व्यक्तिगत खाते में परिवर्तित करना बैंक की ओर से सेवा में कमी का विषय है।

18. **सुधा देवी अग्रवाल** विरुद्ध **यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया** (1996) CCJ 1293.

अक्तूबर 1993 में यूनिट ट्रस्ट ऑफ इन्डिया ने घोषणा की कि मास्टर शेयर धारक 49.70 रुपये प्रति शेयर के आधार पर भुगतान के अधिकारी होंगे तथा भुगतान संबंधित आवश्यक दस्तावेज 1. 11.1993 तथा 30.11.1993 के मध्य इच्छुक शेयर धारक भुगतान के लिये प्रस्तुत कर दें। शिकायतकर्ता ने, जिसके पास 14,300

शेयर थे, 7,10,710 रुपये के आवश्यक दस्तावेज जमा कर दिये। शेयरों के मूल्य के भुगतान में अनावश्यक विलम्ब हुआ।

राज्य आयोग ने इस विलम्ब के लिये 7,10,710 रूपये के भुगतान के अतिरिक्त 2,60,000 क्षतिपूर्ति तथा 1,000 रुपये व्यय के रूप में अदा करने का आदेश दिया।

लेकिन, यूनिट ट्रस्ट ऑफ इन्डिया विरुद्ध सुश्री कविता गुप्ता के मामले में 24.1.1997 के अपने निर्णय में राष्ट्रीय आयोग ने कहा कि केवल यूनिट सर्टिफिकेट्स की अनुपलब्धता के विषय में ही हानि की भरपाई की जा सकती है। किसी अवसर के ह्रास के अवधारण पर कल्पित हानि (उदाहरण के लिये यूनिटों के मूल्यों में कालान्तर में आई गिरावट) की भरपाई का कोई औचित्य नही है।

19. अत्यधिक वर्धित बिल तथा खराब मीटर पर **वाई.एन. गुप्ता** विरुद्ध **डेसू** मामले में राष्ट्रीय कमीशन ने डेसू द्वारा शिकायतकर्ता को भेजे गये नोटिस के विषय में बढ़ा-चढ़ाकर भेजे गये बिजली के बिल के विषय में शिकायत पर गौर किया। इस मामले में डेसू ने सामान्य बिलिंग चक्र के आधार पर बिल नही भेजे तथा खराब बिजली के मीटर को भी नहीं बदला। ऊपर से डेसू ने 21 दिसम्बर 1988 से 25 मार्च 1990 की अवधि के लिये 1.06 लाख रुपये का बिल ठोक दिया। बिजली का कनेक्शन भी काट दिया गया जो कि महा प्रबंधक को की गई शिकायत के उपरान्त चालू कर दिया गया। राष्ट्रीय आयोग ने निर्णय दिया कि ऐसी स्थिति जिसमें उपभोक्ता ने एक लाख यूनिट का उपभोग किया होगा तथा उस बेचारे को एक लाख रुपये का भुगतान करना पड़े कल्पना से

बाहर की बात है। आयोग ने माना कि बिल लापरवाही से बनाये गये हैं। विद्युत अधिनियम 1910 के अनुसार एक खराब मीटर पर छह माह से अधिक का बिल देना डेसू के अधिकार में नहीं है। इन परिस्थितियों में राष्ट्रीय आयोग ने सेवा में अपर्याप्ता आ मामला मानते हुए डेसू को 30,000 रुपये क्षतिपूर्ति एवं 5000 रुपये व्यय का भुगतान करने का आदेश दिया।

20. सरकारी कर्मचारियों की सेवा किसी मूल्य के लिये नही अपितु वैधानिक उत्तरदायित्व है। **एस.पी. गोयल** विरुद्ध **स्टाम्प कलेक्टर** मामले से यह माना गया कि अपने वैधानिक उत्तरदायित्वों का पालन करने में सरकारी कर्मचारी कोई सेवा प्रदान नहीं कर रहे हैं अत: उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत इस विषय में कोई राहत नहीं दी जा सकती। इस मामले में शिकायतकर्ता ने कुछ दस्तावेजों को वसीयत बताते हुए सब-रजिस्ट्रार के सम्मुख पंजीकरण हेतु प्रस्तुत किया। सब-रजिस्ट्रार ने दस्तावेज को वसीयत के बजाय विक्रय पत्र मानते हुए अपर्याप्त राजस्व राशि के कारण पंजीकरण करने से मना कर दिया। उसने इन दस्तावेजों को जब्त करके स्टाम्प कलेक्टर को आवश्यक कार्यवाही हेतु प्रेषित कर दिया। कई नोटिसों के बावजूद शिकायतकर्ता कलेक्टर के सम्मुख प्रस्तुत नहीं हुआ। आखिरकार जब शिकायतकर्ता कलेक्टर के सम्मुख प्रस्तुत हुआ उसे कतिपय अन्य दस्तावेज उपलब्ध कराने के लिये कहा गया। इसी बीच प्रार्थी ने उपभोक्ता संरक्षण अधि नियम के अन्तर्गत जिला उपभोक्ता मंच में शिकायत दाखिल कर दी जिसमें उसने स्टाम्प कलेक्टर तथा सब-रजिस्ट्रार पर तंग करने का आरोप लगाते हुऐ क्षतिपूर्ति की मांग की।

जिला मंच ने माना कि क्योंकि प्रार्थी ने पंजीकरण शुल्क का भुगतान किया है अत: उसने सब-रजिस्ट्रार एवं कलेक्टर की सेवाएँ अर्जित की हैं और चूँकि कलेक्टर ने दस्तावेज की प्रकृति पर छ: वर्ष तक कोई निर्णय नहीं दिया है मंच ने शिकायतकर्ता को क्षतिपूर्ति के भुगतान का आदेश दे दिया।

कलेक्टर द्वारा की गई अपील पर राज्य आयोग ने जिला मंच आदेश सही मानते हुऐ क्षतिपूर्ति की राशि को बढ़ाकर 5000 रुपये कर दिया।

कलेक्टर की पुर्नावलोकन प्रार्थना पर राष्ट्रीय आयोग ने माना कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम द्वारा निर्धारित परिभाषा के अन्तर्गत शिकायतकर्ता एक 'उपभोक्ता' नहीं है क्योंकि इस मामले में किसी मूल्य के आधार पर सेवाएँ अर्जित नहीं की गई हैं और वैसे भी सरकार के वैधानिक कार्यों के अन्तर्गत की गई सेवा एक सरकारी कर्मचारी द्वारा शिकायतकर्ता को दी जाने वाली सेवा नहीं माना जा सकता। आयोग ने माना कि यदि कलेक्टर जो सेवाएँ दे रहा है वह सरकार के एक अभिकर्ता के रूप में उस वैधानिक अधिकार से दे रहा है जिसमें उसे राज्य के राजस्व का हित देखना है तथा उसके लिये उसे सरकार से तनख्वाह मिलती है न कि शिकायतकर्ता से। अपील पर सर्वोच्च न्यायलय ने भी राष्ट्रीय आयोग के निर्णय को ही सही ठहराया।

21. **गेस्ट हाउस का रखरखाव** - व्यवसायिक कार्य के लिये नहीं। जे.के. पुरी इनजीनियर्स विरुद्ध मोहन ब्रिवरीज एण्ड डिस्टीलरीज लि. मामले में माना गया कि कम्पनी अधिकारियों के लिये बनाया

गया गेस्ट हाउस व्यवसायिक आशय के लिये नहीं है अत: इसे उपभोक्ता संरक्षण अधिनिमय के अन्तर्गत मान्यता प्राप्त होगी। कम्पनी अपने मैनेजिंग डायरेक्टर व अन्य उच्चाधिकारियों के लिये गेस्ट हाउस चलाती थी। इसने प्रार्थी के साथ सेंट्रल एयर कन्डीशन करने के लिये एक अनुबन्ध किया। कम्पनी ने आरोप लगाया कि लगाया गया सिस्टम ठीक से कार्य नही कर रहा है। प्रार्थी द्वारा दोषों के निवारण में असफल रहने के उपरान्त कम्पनी ने सिस्टम के कार्य की जांच के लिये एक सलाहकार की नियुक्ति की जिसने कई त्रुटियों को उजागर किया। राज्य आयोग ने माना कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत कम्पनी एक उपभोक्ता है क्योंकि एयर कन्डीशनिंग सिस्टम किसी व्यवसायिक कार्य के लिये प्रयोग होता है क्योंकि गेस्ट हाउस व्यवसायिक प्रयोग के लिये नहीं है। राष्ट्रीय आयोग ने भी राज्य आयोग के निर्णय की पुष्टि की।

22. हाउसिंग बार्ड द्वारा आवास उपलब्ध कराने में विफलता सेवा में अपर्याप्तता है।

23. तरण ताल में मूलभूत सुरक्षा प्रदान करने में विफलता सेवा में कमी मानी गई। शशिकांत कृष्णाली डोले विरुद्ध शितशान प्रसारक मण्डली मामले में राष्ट्रीय आयोग ने माना कि तरण-ताल में मूलभूत सुरक्षा प्रदान करने में विफलता सेवा में अपर्याप्तता है। एक स्कूल अपने तरण-ताल में एक शुल्क के भुगतान पर तैराकी सुविधाएँ प्रदान करता था। स्कूल द्वारा शीत व ग्रीष्म कालीन ट्रेनिंग कैम्प लगाए जाते थे जिसमें युवकों को तैरना सिखाने के लिये एक प्रशिक्षक की सेवाएँ ली जाती थीं। शिकायतकर्ता ने अपने इकलौते

बेटे को प्रशिक्षक की देखरेख में तैरना सिखाने के लिये भेजा। उसने आरोप लगाया कि प्रशिक्षक की लापरवाही के कारण उनका बेटा डूब गया और उसकी मृत्यु हो गई। स्कूल ने अपनी किसी भी जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ लिया। प्रशिक्षक ने कहा कि उसको तो युवा लड़कों को तैरना सिखाने का काफी अनुभव है। जब मृत लड़का डूब गया तो प्रशिक्षक ने उसे तुरन्त पानी से बाहर निकाला उसके पेट से पानी भी निकलवाया एवं कृत्रिम श्वासन कराया तथा बाद में डाक्टर के पास ले गया। डाक्टर ने सुझाव दिया कि लड़के को निकटतम अस्पताल ले जाया जाय जहाँ पर लड़के की मृत्यु हो गई। राज्य आयोग ने स्कूल एवं प्रशिक्षक दोनों को मृत बालक को उपयुक्त सेवाएँ देने मे कोताही का दोषी पाया। अपील में राष्ट्रीय आयोग ने भी इस आदेश की पुष्टि की।

24. समय पर भविष्य निधि दावा भुगतान में विफलता सेवा में कमी। **क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, फरीदाबाद** विरुद्ध **शिव कुमार जोशी** मामले में यह माना गया कि नियत समय पर भविष्य निधि राशि के भुगतान में विफलता से सेवा में अपर्याप्तता का मामला बनता है।

25. यात्री के उतरते समय जहाज की सीढ़ियों का हटाया जाना सेवा में त्रुटि कहलायेगी। **स्टेशन प्रबंधक, इंडियन एयरलाइंस** विरुद्ध **डा. जितेश्वर अहीर** वाद में राष्ट्रीय आयोग ने माना कि जहाज से यात्री के उतरते समय सीढ़ियाँ हटाने लगी चोट को सेवा में कमी का विषय कहा जाएगा। जिस समय शिकायत जहाज में बैठा था तो उसे बताया गया कि पहचान न कर पाने के कारण उसका सामान नीचे ही अचिन्हित पड़ा हुआ है। जब वह दरवाजे की ओर

बढ़ा तो उसने सीढ़ी जहाज से लगी हुई पायी और नीचे उतरने को उद्यत हुआ। किन्तु इससे पहले कि उसके शरीर का समस्त भार सीढ़ी पर आता अचानक सीढ़ी हटा ली गई जिसके कारण वो जमीन पर जा गिरा और उसको चोटें आयीं। यात्री ने एयरलाइन से 10 लाख रुपये की क्षतिपूर्ति माँगी। जहाज कम्पनी 40,000 रु. देने को तैयार थी जो कि हवाई यात्रा अधिनियम 1972 के तहत अधिकतम सीमा है। राज्य आयोग ने 4 लाख रुपये पूतिपूर्ति एवं एक लाख रुपये मानसिक प्रताड़ना व व्यय के एवज् में देने का आदेश दिया। राष्ट्रीय आयोग ने राज्य आयोग के निर्णय को बहाल रखा।

26. शिक्षा प्रदान करना सेवा नहीं है। **अध्यक्ष शिक्षा बोर्ड** विरुद्ध **मोहिदीन अब्दुल कादिर** के एक मामले में एक शिकायतकर्ता एक विद्यार्थी था जो कि उत्पादन तकनीक के विषय की परीक्षा देना चाहता था। परीक्षा कक्ष पर्यवेक्षक ने उसे इस आधार पर परीक्षा में बैठने की अनुमति नहीं दी कि उसका नाम कोड नं. 2 की परीक्षार्थी सूची में था जबकि वह परीक्षा कोड नं. 1 की थी। उसका आरोप था कि स्टाफ की लापरवाही और व्यवहार के कारण उसको गलती से उस दिन परीक्षा में बैठने से अनुचित कारणवश रोका गया तथा उसको हुई असुविधा के लिये उसे क्षतिपूर्ति दी जाये। राष्ट्रीय आयोग ने माना कि परीक्षा में शामिल होने वाले अभ्यार्थी को वह व्यक्ति नहीं माना जा सकता जिसने किसी मूल्य के एवज में विश्वविद्यालय अथवा बोर्ड की सेवाएँ अर्जित की हैं। अतः वह उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की व्याख्या के अन्तर्गत उपभोक्ता नहीं है और कोई क्षतिपूर्ति देने से इंकार किया।

27. **पूनम वर्मा** विरुद्ध **अश्विन पटेल** मामले में यह माना गया कि यदि कोई व्यक्ति होम्योपैथिक चिकित्सा में प्रशिक्षित है और वह किसी रोगी की ऐलोपैथी प्रणाली से चिकित्सा करता है जिसके फलस्वरूप रोगी की मृत्यु हो जाती है तो वह लापरवाही का दोषी है और क्षतिपूर्ति का देनदार है।

28. **भारती निटिंग कम्पनी** विरुद्ध **डी.एच.एल. वर्ल्डवाइड एक्सप्रेस कोरियर डिवीजन ऑफ एयरफ्रेट लिमिटेड** मामले में माना गया कि सामान की विलंबित पहुँच के कारण हुए नुकसान में कोरियर कम्पनी की देनदारी प्रेषित वस्तुओं के मूल्य के बराबर ही बनती है।

29. **डाकतार विभाग** विरुद्ध **डॉ. आर.सी. सक्सेना** में माना गया कि यदि केवल तकनीकी आधार पर ही पोस्ट आफिस जमा राशि पर ब्याज के भुगतान से मुकरता है तो उसे सेवा में त्रुटि का विषय कहा जायेगा। फरवरी 1988 में उपभोक्ता ने जनरल पोस्ट आफिस, लखनऊ में राष्ट्रीय बचत योजना में एक खाता खोला। मार्च 1989 उसने चम्बा (हिमाचल प्रदेश) में एक इसी प्रकार का खाता खोलकर 90,000 रुपये जमा किये। अपनी अवकाश प्राप्ति पर उसने दोनों खातों को काँगड़ा ट्रान्सफर करवा लिया। जब वह अपनी बकाया राशि निकलवाकर खाता बन्द करना चाहता था तो पोस्ट ऑफिस ने उसे 90,000 रुपये पर ब्याज देने से इस आध ार पर मना कर दिया कि राष्ट्रीय बचत योजना के नियमानुसार इस योजना के अन्तर्गत व्यक्ति केवल एक ही खाता रख सकता है। राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि दूसरा खाता खोलना मात्र एक विसंगति थी तथा वह किसी ऐसे नियम की अवहेलना नहीं

जिसके कारण उसे दूसरे खाते पर ब्याज पाने के अधिकार से वंचित कर दिया जाये।

30. भारत सरकार विरुद्ध नाथमल हंसारिया मामले में रेलवे को उस स्थिति में सेवा में अपर्याप्तता का दोषी माना गया जब एक यात्री की रेल के दो डिब्बों के मध्य में बने रास्ते से गिरने के कारण मृत्यु हो गई।

31. हर्षद जे. शाह विरुद्ध भारतीय जीवन बीमा निगम मामले में माना गया कि भारतीय जीवन बीमा निगम को उस स्थिति में दोषी करार नहीं दिया जा सकता जब पॉलिसी भुगतान न दिये जाने के कारण कालातीत हो गई भले ही यह भुगतान समय रहते निगम के एजेन्ट का कर दिया गया हो। जो कि इसे समय पर निगम में जमा नहीं कर पाया।

वश से बाहर परिस्थितियों के कारण सेवा में कमी :

साधारणतय, उपरोक्त आधार पर यदि सेवा में कमी का मामला प्रकाश में आता है तो उसे अपर्याप्तता मानते हुए क्षतिपूर्ति का आदेश दिया जाता है। परन्तु कभी-कभी ऐसी असामान्य परिस्थितियाँ भी हो जाती हैं जो कि सेवा प्रदाता के वश से बाहर होती हैं। यदि इस प्रकार की परिस्थितियाँ किसी व्यक्ति को वांछित तरीके, गुणवत्ता एवं प्रकृति की सेवाएँ प्रदान करने से अवरुद्ध करती हैं ऐसे व्यक्ति को दण्ड नहीं दिया जाना चाहिये।

उदाहरण : 'क' फसलों की सिंचाई के लिये 'ख' को जल आपूर्ति का वादा करता है। राज्य में पावर ग्रिड विफल हो जाने के कारण 'क'

को अनुबंधित सेवा प्रदान करने से लिये पर्याप्त बिजली उपलब्ध न हो पाई। ऐसी स्थिति में 'क' को सेवा में कमी का दोषी नहीं माना जा सकता लेकिन, सेवा प्रदाता की लापरवाही को, वश से बाहर परिस्थिति के आवरण में क्षमा नहीं किया जा सकता।

उदाहरण : 'क' फसलों की सिंचाई के लिये 'ख' को जल आपूर्ति के लिये सहमत होता है। परन्तु एक ट्रान्सफॉर्मर के जल जाने के कारण पहुँची विद्युत बाधा के कारण वह ऐसा नहीं कर पाता जिसके कारण फसलों को हानि हुई। 'ख' ने 'क' पर सेवाओं में कमी का दावा किया। राष्ट्रीय आयोग ने माना कि 'क' का कर्त्तव्य था कि वह शीघ्रातिशीघ्र ट्रान्सफार्मर की मरम्मत करवाता। चूँकि उसने ऐसा करने में लापरवाही बरती वह सेवा में कमी का दोषी है। उड़ीसा लिफ्ट सिंचाई निगम लि. विरुद्ध बीर किशोर राउत [1991) 2 CPJ 213 (NC)]।

उपभोक्ता को उपलब्ध राहत का दायरा और प्रकार :

उपभोक्ता को सस्ता, सुलभ और द्रुत न्याय दिलाने के लिये अधि नियम ने तीन स्तरीय अर्ध-न्यायिका तन्त्र की जिला, राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर व्यवस्था की है। जिला स्तर पर शिकायत निवारण मंच के रूप में जिला उपभोक्ता मंच है। यदि राज्य सरकार चाहे तो वह एक जिले में एक से अधिक मंचों की भी स्थापना कर सकती है। राज्य स्तर पर इसी प्रकार के निवारण आयोग की व्यवस्था है जिन्हें राज्य आयोग कहा जाता है तथा राष्ट्रीय स्तर पर भी एक राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग है जिसे राष्ट्रीय आयोग कहा जाता है।

शिकायत की परिभाषा :

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 की धारा 2(1)(C) के अनुसार

शिकायत का अर्थ किसी शिकायतकर्ता द्वारा लिखित रूप से लगाये गये आरोप से होता है जिसमें कहा गया हो :

(1) किसी व्यापारी द्वारा व्यापार में अवैध अथवा प्रतिबन्धित तरीके का प्रयोग किया जा रहा है

(2) क्रय की गई वस्तु अथवा क्रय करने के लिये सहमति बनने पर उक्त वस्तु में एक या अनेक दोष सामने आना

(3) ली जा रही अथवा ऐसे लेन-देन की सहमति हो चुकी सेवाओं में कतिपय कमी का उभरना

(4) तत्कालीन कानूनों के मद्देनजर व्यापारी द्वारा बताई गई किसी वस्तु अथवा सेवा के लिये निर्धारित मूल्य अथवा दर से अधिक धन वसूल किया हो

(5) जन-जीवन के लिये खतरनाक ऐसी वस्तुओं का विक्रय किया जा रहा हो। जिनसे आम जीवन की सुरक्षा को किसी प्रकार का खतरा हो और तत्कालीन कानूनों के अन्तर्गत विक्रेता को उसमें प्रयोग की गई सामग्री, तरीकों व प्रयोग के प्रभावों सम्बन्धित जानकारी देना अपरिहार्य हो।

जब किसी वस्तु का मूल्य कानून द्वारा नियत न किया गया हो या वस्तु के पैकेजिंग पर अंकित न किया गया हो तो अधिनियम ऐसे किसी वाद पर ध्यान नहीं देगा जो कि इस आरोप पर आधारित हो कि यह मूल्य अत्याधिक है।

कन्ज्यूमर यूनिटी ट्रस्ट विरुद्ध **राजस्थान राज्य ट्रस्ट सोसाइटी** (1992)1 CPJ 259 में राष्ट्रीय आयोग ने माना कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत 'शिकायत' तभी औचित्य में आती है यदि इसकी धारा 2(1)(c) के अर्न्तगत परिभाषित सेवाओं को धारा 2(1)(d)(ii) के अन्तर्गत परिभाषित 'उपभोक्ता' प्राप्त करता है। इसके अतिरिक्त ये सेवाएँ किसी त्रुटि अथवा कमी से भी ग्रसित हों।

शिकायत कौन कर सकता है? (धारा 12) :

शिकायत निम्न में से किसी एक द्वारा दायर की जा सकती है :

1. वह उपभोक्ता जिसे कोई वस्तु बेची गई है, प्रदान की गई है अथवा बेचने या प्रदाय करने के लिये सहमति हुई है, या उसने कोई सेवाएँ प्राप्त की हों अथवा ऐसा करने पर सहमति बनी हो।

2. कोई भी मान्यता प्राप्त उपभोक्ता संघ, अर्थात् कम्पनी अधिनियम 1956 के अन्तर्गत अथवा अन्य किसी तत्कालीन कानून के तहत पंजीकृत कोई स्वयंसेवी उपभोक्ता संघ। उपभोक्ता का किसी ऐसे संघ का सदस्य होना अनिवार्य नहीं है।

3. एक या अनेक उपभोक्ता, जहाँ कई उपभोक्ताओं के समान हित हों सबकी भलाई के लिये जिला मंच से आज्ञा प्राप्त करके शिकायत दायर कर सकता/सकते हैं।

4. केन्द्र अथवा राज्य सरकारें।

कौन सी शिकायतें दायर की जा सकतीं हैं धारा 2(1)(c) :

निम्नलिखित में से किसी एक या अनेक से संबंधित शिकायत :

(1) किसी व्यापारी ने अनुचित अथवा प्रतिबंधित व्यापारिक व्यवहार का पालन किया है।

(2) खरीदी गई अथवा जिनके खरीदने के लिये सहमति बनी हो ऐसी वस्तुएँ किसी एक अथवा अनेक दोषों से ग्रस्त हों।

(3) ऐसी सेवाएँ जो प्राप्त की गई हों अथवा जिन्हें प्राप्त करने के लिये सहमति बनी हो किसी प्रकार की त्रुटि अथवा अपर्याप्तता से ग्रस्त हों।

(4) व्यापारी ने शिकायत में उल्लिखित किसी वस्तु अथवा सेवा के लिये तत्कालीन प्रभाव के किसी कानून का उल्लंघन करते हुए तय मूल्य अथवा पैकेजिंग पर अंकित मूल्य से अधिक धन राशि वसूल की हो।

(5) तत्कालीन प्रभावी कानूनों का उल्लंघन कर ऐसी वस्तु जो आम जन-जीवन और सुरक्षा की दृष्टि से खतरनाक हो बिना उसमें प्रयुक्त सामग्री की जानकारी, प्रयोग विधि व प्रभाव के विषय में सूचना दिये विक्रय करना।

शिकायत कहाँ दर्ज करें

(1) यदि दावा की गई वस्तुओं, सेवाओं और किसी क्षतिपूर्ति की रकम 20 लाख रुपये से कम है तो उस जिला मंच में शिकायत दर्ज की जा सकती है जिसके न्यायक्षेत्र में शिकायतकर्ता वास्तव में रहता हो, व्यवसाय करता हो अथवा लाभ के किसी कार्य में लगा हो,

कोई शाखा कार्यालय हो अथवा पूर्ण रूप या आंशिक रूप से शिकायत का कारण बना हो।

(2) यदि वस्तुओं अथवा सेवा तथा क्षतिपूर्ति की रकम 20 लाख रुपये से अधिक और 1 करोड़ से कम है तो राज्य आयोग के समक्ष शिकायत दायर की जा सकती है (धारा 17) ।

(3) जब अनेक लोगों की ओर से एक संयुक्त शिकायत दर्ज की गई हो तो क्षतिपूर्ति की कुल राशि (न कि प्रत्येक दावे की राशि) के आधार पर ही वाद का न्यायक्षेत्र निर्धारित होगा। यदि दावे की कुल राशि 20 लाख से ऊपर है तथा एक करोड़ से कम है तो राज्य आयोग ही शिकायत की सुनवाई कर सकता है। (जन स्वास्थ्य अभियन्त्रण विभाग विरुद्ध उपभोक्ता संरक्षण समीति)

राज्य के अन्तर्गत किसी जिला मंच के आदेश के विरूद्ध अपील की सुनवाई उस राज्य के आयोग के न्यायक्षेत्र में आती है (धारा 17) ।

3. यदि वस्तुओं अथवा सेवाओं का मूल्य और किसी क्षतिपूर्ति की कुल धनराशि एक करोड़ रुपये से अधिक है तो राष्ट्रीय आयोग के सम्मुख शिकायत दर्ज की जा सकती है।

किसी राज्य आयोग के आदेश के विरुद्ध अपील भी राष्ट्रीय आयोग के न्यायक्षेत्र में आयेगी (धारा 21) ।

शिकायत कैसे दायर करें :

निर्धारित शुल्क एवं प्रणाली के साथ शिकायत दर्ज की जा सकती है।

शिकायतकर्ता अथवा उसका अधिकारिक प्रतिनिधि स्वयं व्यक्तिगत रूप से शिकायत प्रस्तुत कर सकता है।

शिकायत डाक द्वारा भी उपयुक्त मंच अथवा आयोग को प्रेषित की जा सकती है।

शिकायत मंच/आयोग के अध्यक्ष को संबोधित होनी चाहिये।

शिकायत में निम्नलिखित जानकारी दी जानी चाहिये :

(क) शिकायतकर्ता का नाम, परिचय और पता

(ख) जिसके विरुद्ध शिकायत दर्ज की जा रही हो उसका पूरा नाम, परिचय और पता।

(ग) शिकायत के कारणों, सम्पूर्ण तथ्य, स्थान एवं समय।

(घ) यदि उपलब्ध हो तो शिकायत के समर्थन में आवश्यक दस्तावेज।

(ङ) शिकायतकर्ता अपनी शिकायत के निवारण के रूप में किस प्रकार की राहत चाहता है।

शिकायत पर शिकायतकर्ता अथवा उसके द्वारा अधिकृत व्यक्ति के हस्ताक्षर होने चाहिये।

उपभोक्ताओं को उपलब्ध राहत (धारा 14)

यदि धारा 13 के अन्तर्गत की गई कार्यवाही में जिला मंच इस बात

से संतुष्ट है कि शिकायत में आरोपित वस्तु किसी एक दोष से वास्तव में ग्रसित है या किसी सेवा के विषय में लगाये गये आरोप सही साबित होते हैं तो यह प्रतिवादी पक्ष को निम्नलिखित में से एक अथवा अनेक के विषय में आदेश दे सकता है :

(क) उपयुक्त जाँच लैब द्वारा इंगित दोषों का निवारण।

(ख) खराब वस्तुओं के बदले में समान विशेषताओं वाली दूसरी दोषमुक्त वस्तुएँ उपलब्ध कराना।

(ग) खराब वस्तु की कीमत या सेवा का शुल्क वापस दिलवाना।

(घ) प्रतिवादी पक्ष की लापरवाही से हुई किसी हानि अथवा चोट के एवज में उपभोक्ता को क्षतिपूर्ति दिलवाना।

(ड़) उल्लिखित सेवा में त्रुटि अथवा कमी को दूर करवाना।

(च) अवैद्य अथवा प्रतिबन्धित व्यापार प्रक्रिया को रोकना व उनकी पुर्नवत्ति को रोकना।

(छ) खतरनाक वस्तुओं को बिक्री के लिये न रखना।

(ज) खतरनाक वस्तुओं की बिक्री रद्द करना।

(झ) खतरनाक वस्तुओं के उत्पादन पर रोक लगाना और खतरनाक किस्म की सेवाओं को प्रतिबन्धित करना।

(त) यदि किसी उत्पाद या सेवा से अनेक उपभोक्ताओं को हानि हुई है। जिसकी पहचान सुविधाजनक न हो तो ऐसी स्थिति में मंच एक मुश्त राशि अदा करने का आदेश दे सकता है। यह राशि उपभोक्ता मंच द्वारा ही तय की जायेगी लेकिन यह राशि वस्तुओं के कुल मूल्य या सेवाओं के कुल शुल्क के पांच प्रतिशत से कम नहीं होगी।

इसमें आगे प्रावधान है कि इस प्रकार से उपलब्ध राशि क
निर्धारित व्यक्तियों में बाँटा जायेगा और धनराशि का उपयोग भी निर्दिष्ट तरीके से होगा।

(थ) भ्रामक विज्ञापन जारी करने वाले प्रतिवादी पक्ष के हर्जे और खर्चे पर भ्रामक प्रचार का प्रभाव शून्य करने के लिये नये सिरे से संशोधित विज्ञापन देना।

(द) पीडित पक्ष को समुचित व्यय राशि दिलवाने की व्यवस्था करना।